www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

अप्रैल 2012

महावीर की दृष्टि में सर्वोदय

स्पष्ट है महावीर का दर्शन

राम नाम में छिपी दिव्यता

पूजा से हो दिन की शुरुआत

VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS

—: SPECIALISTS IN :—

LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT

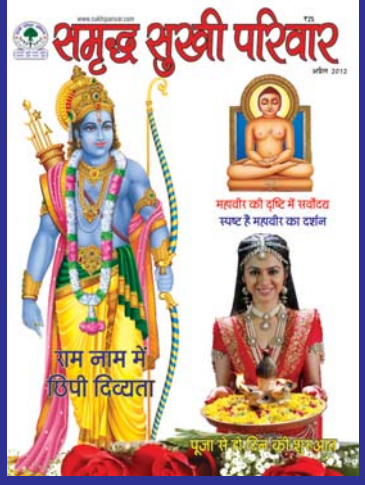

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 3 अंक : 3

अप्रैल 2012, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
अशोक एस. कोठारी
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

कला एवं साज-सज्जा
महेन्द्र बोरा
(9910406059)

सलाहकार मंडल
दीपक रथ, दीपक जैन-भायंदर,
अशोक एस. कोठारी, दिनेश बी. मेहता,
निकेश एम. जैन, कुशलराज बी. जैन,
नवीन एस. जैन, श्रेणिक एम. जैन-मुंबई,
बिन्दू रायसोनी,
चंदू वी. सोलंकी-बैंगलौर,
मुकेश अग्रवाल-दिल्ली,
विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797, 011-29847741

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अर्पाटमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

7

सफल जीवन के सूत्र

'बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेय।' जो बीत गया सो तो बीत गया। अब वह तो वापिस आने से रहा। चाहे उसका परिणाम अच्छा रहा हो या बुरा, वह तो हो चुका है। उसको याद करना तो गड़े मुर्दे उखाड़ने जैसा है। जो नहीं है जिसका अस्तित्व ही नहीं है, उसकी चर्चा-परिचर्चा करके अमूल्य समय नष्ट करना मूर्खता नहीं तो और क्या है? -गणि राजेन्द्र विजय

6	धर्म, पाप और पुण्य	वल्लभ उवाच
6	अभी से जुट जाओ बेहतर जिंदगी के लिए	सिमोन दि बोबुआर
9	राम नाम की महिमा	किशन धीरज
10	स्वर्ग-नरक की कल्पना	सीताराम गुप्ता
11	महावीर की दृष्टि में सर्वोदय	गणेश मुनि शास्त्री
12	अशांति में शांति की खोज	नीलम जैन
13	परमात्मा पर विश्वास करना सीखें	योगीराज पायलट बाबा
13	तीर्थ का महत्व	श्री किरीट भाईजी
14	जीवन में तिलक का लाभ	श्री नरेन्द्र कुमार 'भैया'
14	क्यों आते हैं खर्राटे?	प्रेमा राव
15	मन से नहीं, हृदय से मांगो	प्रेम रावत महाराज
15	राम नाम में छिपी दिव्यता	श्री श्री रविशंकर
16	संस्कार के प्रणेता नारद	पी. डी. सिंह
17	गोवंश की रक्षा के लिए आये थे श्रीकृष्ण	स्वामी करपात्री
17	सत्कर्म का परिणाम	श्री आनंदमूर्ति
18	प्रकांड विद्वान थे हनुमान	हिमांशु शेखर
19	स्पष्ट है महावीर का दर्शन	आचार्य श्री विद्यासागर
20	स्वप्न बफादार प्रहरी है	डॉ. भागरानी कालरा
22	जीवन में विवेक जागे	साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा
23	अंधकार से उबारता है गुरु	आचार्य सुदर्शन
26	चमत्कारिक तंत्रपीठ हुम्बच	निधि जैन
27	विष्णु के छठे अवतार हैं परशुरामजी	चंद्रमोहन
28	पूजा से हो दिन की शुरुआत	डॉ. के. के. अग्रवाल
28	संस्कार का महत्व	दिलीप भाटिया
29	स्वस्थ रहने के रहस्य	मंजुला जैन
30	ब्रह्मचर्य शारीरिक संबंधों का निषेध मात्र नहीं	लक्ष्मीनारायण मित्तल
31	स्तुति से लाभ किसको?	आचार्य विजय नित्यानंद सूरि
32	असंभव को संभव बनाने का द्वार	के. जी. शारदा
33	शब्द की महिमा, ईश्वर की शक्ति	ज्ञानी संत सिंह मस्कीन
33	बह गये कोटि कबीर	लक्ष्मी रानी लाल
34	अपरिग्रह का सुख	नीलम जैन
35	नये मेट्रो मैन की सफलता के सूत्र	प्रकाश जैन
35	अमृत फल आंवला	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
36	गुणकारी औषधि है नींबू	सुप्रिया
36	नानक दुखिया सब संसार	विश्वनाथ गुप्त
38	मंदिर तो इंसान स्वयं है	रामकिशोर शर्मा
38	संत और मधुमक्खी	मृदुला सिन्हा
39	योगी से पहले उपयोगी बनो	आचार्य शिवेन्द्र नागर
40	Stop woorying, empower yourself now	Shri Shri Nimishananda
40	Symbolism behind a temple	Ramnath Narayanswamy
41	Stay free of attachment	Sant Rajinder Singh
41	When a rose is not a rose	Purnima
42	अनुभव की सीख	मुरली कांठेड़
45	प्रकृति की रंगशाला कौसानी	पुखराज सेठिया
46	एक नई परंपरा की शुरुआत	अशोक एस. कोठारी

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका का फरवरी-2012 अंक प्राप्त होते ही आंखों के रास्ते सुख हृदय में उतर गया। एक निर्मल-सा अनुभव समस्त परिवार को हुआ। रंगों की छटा और सामग्री की अनुकूलता ने मंत्रमुग्ध कर दिया। सामग्री का प्रस्तुतीकरण गागर में सागर वाली कहावत को चरितार्थ करता है। प्रशंसा के लिए शब्द बौने प्रतीत होते हैं। पत्रिका परिवार के लिए हृदय की समस्त शुद्ध भावनाओं के साथ साधुवाद।

अपना मुकद्दर जो खुद हैं बनाते,
दुनिया उन्हीं की धुरी घूमती है।
मेहनत ही जिनका धरम है करम है,
सफलता उन्हीं के चरण चूमती हैं।

–डॉ. राकेश अग्रवाल
'हिमदीप' राधापुरी, हापुड़ (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका निरंतर अधिक निखार के साथ प्राप्त हो रही है। यह पत्रिका बहुआयामी है। बालकों, युवाओं तथा वृद्धों सभी के लिए पठनीय सामग्री इसमें सदा उपलब्ध रहती है। सचित्र छोटे-छोटे आलेख-सामयिक विषयों पर ज्ञानवर्द्धक सभी धर्मावलम्बियों की रुचि के लेख, प्रवचन तथा स्वास्थ्य संबंधी जानकारी आदि इस पत्रिका की मुख्य विशेषताएं हैं।

विशेष रूप से आपकी संपादकीय सामयिक, बेबाक और प्रभावोत्पादक होती है। फरवरी-2012 का अंक मेरे सामने है। आपकी संपादकीय स्वस्थ लोकतंत्र के लिए अर्जुन की आंख चाहिए बहुत श्रेष्ठ है। वर्तमान राजनैतिक दलों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। लगभग सभी दल निजी स्वार्थ में लिप्त हैं। भाई-भतीजावाद तथा निजी संतति को येन-केन प्रकारेण उच्चतम राजनैतिक पद पर प्रतिष्ठित कराना चाहते हैं, चाहे उनमें उस पद की योग्यता हो या न हो। देश तथा जनता के हित चिंतन करने वाला कोई भी दल दिखलाई नहीं देता है। महाभारत के पात्रों के उदाहरण सटीक हैं। पत्रिका की अन्य सामग्री (लेख, कविताएं आदि) भी उत्तम हैं। पत्रिका का मुद्रण, कागज और साज-सज्जा भी श्रेष्ठ है। पत्रिका नयनाभिराम है।

–प्रो. महेन्द्र रायजादा
5-ख-20, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार का फरवरी-2012 अंक प्राप्त हुआ। हार्दिक आभार। साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक संदर्भों से जुड़ी यह पत्रिका निरन्तर विकास की ओर अग्रसर है। लोक जीवन में सुख, समृद्धि एवं शांति बनाये रखने वाले सारे तत्व पत्रिका के सारे आलेखों एवं कविताओं में संरक्षित रहते हैं।

–राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'
ग्रा. फत्तेपुर, पो. बेनीकामा
जिला- रायबरेली-229402 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार का नया अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका प्रथम बार देखने को मिली। सुंदर, संस्कारित, ज्ञानवर्धक, पठनीय एवं संग्रहणीय है यह पत्रिका। अच्छे संपादन के लिए बधाई।

–मोहन द्विवेदी
डी-180, महेन्द्रा इन्कलेव (शास्त्रीनगर)
गाजियाबाद-201002 (उ.प्र.)

तमाम ज्वलंत मुद्दों के समाधानपरक लेखों, प्रेरणादायी रचनाओं, जानकारियों आदि से ओतप्रोत 'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका का फरवरी-2012 का प्रेरणादायी अंक प्राप्त हुआ। मैं विश्वास से कह सकता हूं कि विश्व की मानव जाति का भविष्य मार्गदर्शक पूज्य गणि राजेन्द्र विजयजी जैसी महान आत्माओं तथा आप जैसे विचारशील संपादकों के हाथों में सुरक्षित है। 'समृद्ध सुखी परिवार' पत्रिका के माध्यम से समस्त मानव जाति के कल्याण की भावना से किये जा रहे आपके प्रयास सराहनीय ही नहीं अनुकरणीय है। आपका उद्घोष भारतीय संस्कृति की मूल भावना वसुधैव कुटुम्बकम के अनुकूल है।

हमारा मानना है कि विश्व समाज में आज जो भी आपाधापी मची है इसका कारण उद्देश्यहीन शिक्षा है तथा इसका समाधान भी शिक्षा को उद्देश्यपूर्ण बनाकर मिलेगा। प्रत्येक बच्चों को भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा के साथ बाल्यावस्था से ही कानून, व्यवस्था एवं न्याय की शिक्षा दी जानी चाहिए। सभी धर्मों की मूल आध्यात्मिक शिक्षाएं एक जैसी हैं। इसी विचार को पत्रिका प्रभावी ढंग से प्रस्तुति दे रही है।

–डॉ. जगदीश गांधी
सिटी मांटेसरी स्कूल, 12, स्टेशन रोड
लखनऊ-226001 (उ.प्र.)

आपके संपादन में नियमित निकलने वाली 'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका के संपादकीय, रचना चयन, संदर्भ वैविध्य और शिल्पात्मक स्तर को देखकर, पढ़कर और

परखकर अभिभूत हूं।

यह मात्र एक पत्रिका नहीं, प्रत्युत युगीन प्रभाव के कारण अर्ध विक्षिप्त होते जा रहे भारतीय समाज के लिए 'संजीवनी' है। हर शिक्षित, सहृदय एवं सुसंस्कृत परिवार के लिए सहेज कर रखने योग्य वैष्णवी भावना है। संपादकीय तो चंदन की माला का सुमेरू मनका है। बधाई!

–डॉ. राधेश्याम शुक्ल
392, एम.जी.ए., हिसार (हरियाणा)

समृद्ध सुखी परिवार सच्चे अर्थों में भारतीय संस्कृति की विशेषता अर्थात् अनेकता में एकता की सही प्रतिनिधि पत्रिका है। इसमें सबके लिए सब कुछ हैं। सभी धर्मावलम्बी, सभी मत-मतान्तर, विचारधारा तथा विभिन्न रुचि के लोगों के लिए जीवन को दिशा देने वाले चेतना-परक, जीवन को जीने की राह एवं मंतव्य बताने वाले तथा पारिवारिक लेख भी होते हैं।

संपादकीय एवं अध्यक्षीय आलेख अत्यंत प्रेरक एवं प्रभावी होते हैं। संपादकीय में सामयिक और अध्यक्षीय में आध्यात्मिक विचार होते हैं। पत्रिका अपने आप में संपूर्ण है, सबके लिए है, प्रस्तुति व मुद्रण प्रशंसनीय है।

–पी. डी. सिंह
टैगोर पब्लिक स्कूल, शास्त्री नगर रोड
जयपुर-302016 (राजस्थान)

इनके भी पत्र मिले:

सुरेश आनंद (रतलाम-म.प्र.), प्रो. चांदमल कर्णावट (उदयपुर-राजस्थान), हुकूमचंद सेगानी (उज्जैन-म.प्र.), मोहनलाल मागो (दिल्ली), किशनलाल शर्मा (आगरा-उ.प्र.), पूनम गुजरानी (सूरत-गुजरात), कुलदीप कुमार (दिल्ली), ताराचंद आहूजा-जयपुर (राजस्थान), त्रिलोकचंद जैन (शालीमार बाग, दिल्ली), ओमप्रकाश पोद्दार (जयपुर, राजस्थान), डॉ. सुरेश प्रसाद शुक्ल (लखनऊ, उ.प्र.), मोहनलाल मगो (दिल्ली), ब्रजेश कुमार त्यागी (दिल्ली)।

संपादकीय

भारत की तस्वीर को नया रंग दें

जीवन में मौसम ही नहीं बदलता माहौल, मकसद, मूल्य और मूड सभी कुछ परिस्थिति और परिवेश के परिप्रेक्ष्य में बदलता है। और ये बदलते दौर में जीवन को कई बार विचित्र नए अर्थ दे जाते हैं। अप्रैल माह ऐसे ही नये अर्थ और दिशाएं देने को सम्मुख खड़ा है। पांच राज्यों के विधानसभा चुनावों के बाद नये चेहरें एवं नये कार्यक्रम होंगे, वहीं इस माह में जहां भगवान राम, भगवान महावीर, हनुमान, माता सीता, वल्लभाचार्य, परशुराम, आद्य शंकराचार्य, रामानुजाचार्य जैसे महापुरुषों की जन्म जयन्तियां हमें कुछ नया करने और संकल्पित होने को प्रेरणा देगी वहीं अक्षय तृतीया का आयोजन हमें त्याग एवं तपमय जीवन के लिये आधारभूमि देगा। ऐसा लगता है कि जिन्दगी के सारे आदर्श और सारी रचनात्मकता एवं सृजनात्मकता स्वयं में समेटकर त्यौहारों एवं पर्वों का माहौल देने को उपस्थित है। ऐसे ही माहौल में मनुष्य भीतर से खुलता है वक्त का पारदर्शी टुकड़ा बनकर। भला ऐसा कौन-सा इंसान होगा, जिसे त्यौहारों एवं पर्वों का माहौल आनंदित न करता हो। ये पर्व हमारे जीवन में उत्साह, उल्लास व उमंग की आपूर्ति करते हैं। शुष्क जीवन-व्यवहार के बोझ के नीचे दबा हुआ इंसान इस खुशनुमा मौसम एवं माहौल में थोड़ी-सी मुक्त सांस लेकर आराम महसूस करता है। जीवन की जड़ता उत्साह में बदल जाती है। हमारा देश ऐसे ही उत्सवों एवं त्यौहारों की वैभवता से सम्पन्न है, एक विशेष और आदर्श संस्कृति का वाहक है, फिर भी यह सब हमारे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में अभिव्यक्त क्यों नहीं हो पाता? क्यों बार-बार नारी की अस्मिता को तार-तार कर दिया जाता है, क्यों सामूहिक बलात्कार की घटनाएं तमाम विकास की तस्वीर को धुंधला जाती है, यह जीवन इतना बंधा-बंधा सा क्यों है? ये कैसी दीवारें हैं? इतनी गुलामी, इतने दुख कहां से इस देश के हिस्से में आ गए?

हजारों-हजारों साल से जिस प्रकृति ने भारतीय मन को आकार दिया था, उसे रचा था, भारतीयता की एक अलग छवि का निर्माण हुआ, यहां के इंसानों की इंसानियत ने दुनिया को आकर्षित किया, संस्कृति एवं संस्कारों, जीवन-मूल्यों की एक नई पहचान बनी। ऐसा क्या हुआ कि पिछली कुछ सदियों में उसके साथ कुछ गलत हुआ है, और वह गलत दिनोंदिन गहराता गया है जिससे सारा माहौल ही प्रदूषित हो गया है, जीवन के सारे रंग ही फिके पड़ गये हैं, हम अपने ही भीतर की हरियाली से वंचित हो गए लोग हैं। न कहीं आपसी विश्वास रहा, न किसी का परस्पर प्यार। न सहयोग की उदात्त भावना रही, न संघर्ष में सामूहिकता का स्वर, बिखराव की भीड़ में न किसी ने हाथ थामा, न किसी ने आग्रह की पकड़ छोड़ी। यूं लगता है सब कुछ खोकर विभक्त मन अकेला खड़ा है फिर से सब कुछ पाने की आशा में। क्या यह प्रतीक्षा झूठी है? क्या यह अगवानी अर्थशून्य है?

देश को अपनी खोयी प्रतिष्ठा पानी है, उन्नत चरित्र बनाना है तथा स्वस्थ समाज की रचना करनी है तो हमें एक ऐसी जीवनशैली को स्वीकार करना होगा जो जीवन में पवित्रता दे। राष्ट्रीय प्रेम व स्वस्थ समाज की रचना की दृष्टि दे। कदाचार के इस अंधेरे कुएँ से निकले। बिना इसके देश का विकास और भौतिक उपलब्धियां बेमानी हैं। व्यक्ति, परिवार और राष्ट्रीय स्तर पर हमारे इरादों की शुद्धता महत्व रखती है, हमें खोज सुख की नहीं सत्व की करनी है क्योंकि सुख ने सुविधा दी और सुविधा से शोषण जनमा जबकि सत्व में शांति के लिये संघर्ष है और संघर्ष सचाई तक पहुंचने की तैयारी। हमें स्वयं की पहचान चाहिए और सारे विशेषणों से हटकर इंसान बने रहने का हक चाहिए। इस खोए अर्थ की तलाश करनी ही होगी। उपभोक्ता बनकर नहीं मनुष्य बनकर जीना नए सिरे से सीखना ही होगा। संस्कृति और मूल्यों के नष्ट अध्यायों को न सिर्फ पढ़ना होगा, बल्कि उन्हें नया रूप और नया अर्थ भी देना होगा। एक नई यात्रा शुरू करनी होगी। इसके लिये हमारे पर्वों एवं त्यौहारों की विशेष सार्थकता है। श्रीकृष्ण ने कहा है- जीवन एक उत्सव है। उनके इस कथन पर भारतीयों का पूर्ण विश्वास है। हम जीवन के हर दिन को उत्सव की तरह जीते हैं, ढेरों विसंगतियों और विद्रूपताओं से जूझते हुए। संकट में होशमंद रहने और हर मुसीबत के बाद उठ खड़े होने का जज्बा विशुद्ध भारतीय है और ऋतु-राग गुनगुनाते हुए अलग-अलग मौसम में उत्सव मनाने का भी। यही वजह है कि हम गर्व से कहते हैं- फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी... पर इस सच से इनकार नहीं किया जा सकता कि बदलती दुनिया के असर से उत्सवधर्मिता का जज्बा काफी प्रभावित हो रहा है। सबसे ज्यादा हमारे पर्व और त्यौहार की संस्कृति ही धुंधली हुई है। खेद की बात है कि हमने पश्चिम की श्रेष्ठ परम्पराओं को आत्मसात नहीं किया, बल्कि उसके साम्राज्यवाद के शिकार बने।

बदलाव की संस्कृति में सवालिया नजर केवल भारतीय पर्व और त्यौहार पर ही नहीं, बल्कि राजनीति पर टिकी है,क्योंकि हाल के चुनाव परिणामों ने कांग्रेस और भाजपा से अलग एक तीसरे रास्ते यानी गठबंधन की संभावना को पूरजोर तरीके से प्रकट किया है। इन चुनावों में युवा नेतृत्व की संभावनाओं पर भी मोहर लगायी गयी है। हमें राजनीति को व्यक्ति नहीं, विचार और विश्वास आधारित बनाना होगा। चेहरा नहीं, चरित्र को प्राथमिकता देनी होगी। आज भी हम पिछड़े हैं, असुरक्षित हैं, अशिक्षित हैं। कभी हमें विश्व स्तर पर भ्रष्टाचारी होने का तगमा पकड़ा दिया जाता है तो कभी साम्प्रदायिकता का। कभी गरीबी का तो कभी अशिक्षा का, इससे बढ़कर और क्या दुर्भाग्य होगा? क्या विश्व के हासिए में उभरती भारत की इस तस्वीर को हम कोई नया रंग नहीं दे सकते?

हमें त्यौहारों एवं पर्वों ही नहीं बल्कि राजनीति की संस्कृति को भी समृद्ध बनाना होगा। हर दिन एक तलाश हो—अपनी और उस अछोर जीवन की, उस विराट प्रकृति की, हमारा अस्तित्व जिसकी एक कड़ी है। किसी भोर का उगता सूरज, कोई बल खाती नदी, दूर तक फैला कोई मैदान, कोई चरागाह, कोई सिंदूरी शाम, दूर गांव से आती कोई ढोलक की थाप, पीछे छूटती दृश्यावलियां... हमारे भीतर रच-बस जाती हैं। यही सब जीवन की संपदाएं हैं, हमारे अंतर में जगमगाती-कौंधती रोशनियां हैं, जिनकी आभा में हम उस सब को पहचान पाते हैं जो जीवन है, जो हमारी पहचान के मानक हैं। हम भारत के लोग इसलिए विशिष्ट नहीं हैं कि हम 'जगतगुरु' रहे हैं, या हम महान आध्यात्मिक अतीत रखते हैं। हम विशिष्ट इसलिए हैं कि हमारे पास मानवता के सबसे प्राचीन और गहरे अनुभव हैं। ये अनुभव सिर्फ इतिहास और संस्कृति के अनुभव नहीं हैं, इसमें नदियों का प्रवाह, बदलते मौसमों की खुशबू, विविध त्यौहारों की सांस्कृतिक आभा और प्रकृति का विराट लीला-संसार समाया हुआ है। हमारा हर दिन पर्व और त्यौहार बने, हमारी जीवनशैली दिशासूचक बने। गिरजे पर लगा दिशा-सूचक नहीं, वह तो जिधर की हवा होती है उधर ही घूम जाता है। कुतुबनुमा बने, जो हर स्थिति मे सही दिशा बताता है।

वल्लभ उवाच

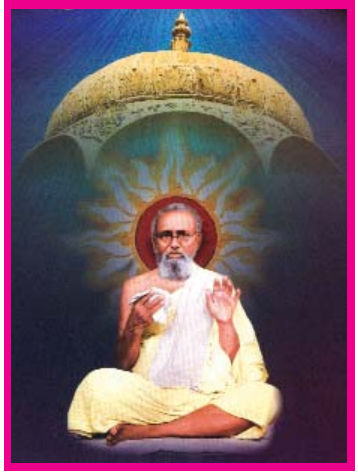

स्नेह और सहयोग

''भानुमति का पिटारा'' शब्द का अर्थ आप समझते होंगे इस कहावत के पीछे जो उपहास की भावना का समावेश है, वही समाज का वास्तविक रूप है।

आज इस शब्द ''समाज'' का अर्थ समुदाय दल या संगठन लगाया जाता है जो उपहास पूर्ण है।

पहले समाज केवल ''मानव समाज'' के अर्थ में लिया जाता था क्योंकि ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' ही मानवता का आदर्श था।

परंतु आज हर कदम पर हर गली में नए-नए समाज बनते हैं, बिगड़ते हैं, अस्तित्व किसी का स्थाई दृष्टिगोचर नहीं होता।

ब्राह्मण समाज, क्षत्रिय समाज, आर्य समाज, गौढ़ समाज, भगिनी समाज, भंगी समाज, तरकारी बिक्रेता समाज, नाऊ समाज।

क्या सुन्दर संकलन है समाजों का-और इनकी अपनी अपनी बेसुरी आवाजों का।

अरे भाई! क्या ''मानव समाज'' में इन सबका एक रूप न था?

परंतु यह कैसे मालूम पड़े कि मानव स्वार्थी, अहंकारी और मूर्ख है?

कैसे सिद्ध होगा कि विश्व के इस अखाड़े में पहलवानी का शौक बढ़ रहा है। दिन प्रतिदिन और मानव केवल अपना स्वार्थ जानता है।

जब आप कहते हैं ''आम की बहार है'' तो इस एक शब्द में ''आम में'' सभी आम आ जाते हैं-हापुस, पायरी, लंगड़ा, तोतापरी, नीलम, दशहरी आदि क्योंकि सब आम हैं।

परंतु वाह रे मानव!

तूने प्रकृति से भी कुछ न सीखा.....।

कीट पतंगों के समान भी अपने समाज का वितरण तू न कर सका।

पशु पक्षियों ने अपना समाजीकरण न किया।

परंतु तूने अपने आपको भिन्न-भिन्न शाखाओं में बदलकर इतने समाजों में बांट लिया।

जिनका समीक्षीकरण भी आज कठिन हो रहा है।

यहां तक कि अब राजनीति में भी समाज ने घुसकर आपसी वैमनस्य, प्रतिस्पर्धा और बैर पैदा कर दिया है।

समाजवाद इसी मूर्खता का एक पारितोषिक है।

समाज का अर्थ है ''मानव समाज''

सारा विश्व का एक समाज है।

यदि इतना सोचले इन्साल तो फिर कल्याण ही होगा,

उत्थान ही होगा, पतन नहीं।

राष्ट्र-शांति के लिये राष्ट्र के प्रत्येक सदस्य को राष्ट्र-धर्म का पालन करना चाहिये। राष्ट्र के प्रति पूरी कादारी रख कर राष्ट्र की उन्नति के बारे में सहयोग देना चाहिये। जब भी राष्ट्र पर आफत आए तब सब मतभेदों को भुलाकर उस आफत का पूरी ताकत से सामना करना चाहिये। राष्ट्र विरोधी तत्वों को न तो बढ़ावा देना चाहिये और न स्वयं राष्ट्रहित के विरुद्ध कोई कार्य करना चाहिये। राष्ट्र में फूट डालना, राष्ट्र को गुलाम बनाने की मुरादवालों को प्रोत्साहन देना, दंगे, हड़ताल, तोड़फोड आदि करना राष्ट्र के प्रति गद्दारी है। राष्ट्र में अशांति को न्यौता देना है। अत: इन गलत कार्यों को करना राष्ट्र शांति में विघ्न डालना है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि हम दूसरे राष्ट्रों के प्रति द्वेष, शत्रुता या वैर विरोध रखें, उनकी उन्नति देखकर जलें। हमें दूसरे राष्ट्रों के प्रति स्नेह सौजन्य व सहयोग की भावना रखनी है। ■

अभी से जुट जाओ, बेहतर जिंदगी के लिए

सिमोन दि बोबुआर

जन्म : 9 जनवरी, 1908, पेरिस में। मृत्यु : 14 अप्रैल, 1986। अस्तित्ववादी चिंतक और लेखिका। द सेकेंड सेक्स जैसी किताब के जरिए बीसवीं शताब्दी में स्त्री-विमर्श की जमीन तैयार की और इस मामले में एक लीजेंड की हैसियत। प्रसिद्ध चिंतक और लेखक ज्यां पॉल सार्त्र की संगिनी रहीं और साथ में लेखन और सामाजिक गतिविधियों में जुड़ी रहीं।

● अपनी जिंदगी को आज बदलो, आने वाले कल पर दांव मत खेलो। फौरन जुटो, बिना एक लम्हा गंवाए।

● हमारी जिंदगी दूसरों से मिले प्यार, दोस्ती और देखरेख से अहम बनती है।

● सच का समर्थन कोई अपना फर्ज समझ कर या ग्लानि कम करने के लिए नहीं करता। दरअसल, ऐसा करना ही अपने आप में इनाम है।

● हमारे समाज में औरत पैदा नहीं होती, उसे औरत बन कर जीना पड़ता है। यह जुल्म है, जिससे लड़ने-भिड़ने जैसे हालात पैदा होते हैं।

● जब किसी को अहसास-ए-कमतरी में धकेलने की कोशिश की जाती है तो ऐसे हालात में उस शख्स में हीन-भावना पनप जाती है।

● औरत और मर्द के लिए प्यार शब्द का मतलब एक नहीं है और यहीं फर्क दोनों के बीच ज्यादातर गलतफहमियों की वजह बनता है।

● अपने को एक ऐसी चीज में तब्दील कर लेना, जिस पर किसी बात का असर न हो, दरअसल, उस चीज जैसा हो जाना नहीं है। निष्क्रिय जीव और चीज का फर्क तब भी बना रहता है।

● अपने बच्चों के अपने जैसा ही हो जाने की इच्छा करना गलत है।

● कोई कितना ही प्रतिभा संपन्न क्यों न हो, अगर वह प्रतिभा जिन हालातों में वह जी रहा है, उसमें और विकास नहीं कर पाती तो समझिए उस व्यक्ति का होना-न-होना एक जैसा है।

दिशाबोध

गणि राजेन्द्र विजय

सफल जीवन के सूत्र

मनुष्य का स्वभाव है कि वह केवल दो ही प्रकार का चिंतन करता है। इन्हीं में खोया रहता है। या तो वह भूतकाल के दिनों, घटनाओं, वृत्तान्तों का स्मरण करता रहता है या फिर भविष्य की सुनहरी योजनाएं बनाता रहता है। कल्पनाओं के संसार में उलझा रहता है। कभी वह यह सोचता है कि जो बीत गया वह कितना अच्छा था, कितना सुखद था, कितना आरामदायी था, कभी वह यह सोचता है कि अब अगर ऐसा हो गया तो उसका परिणाम यह होगा, ऐसा हो जाए तो हमें ये सुख-सुविधाएं मिल जायेंगी। परिवार तथा समाज में उन्नति हो जाए तो सम्मान बढ़ जाएगा। सुख-सुविधाएं बढ़ जायेंगी, दुखों का अंत हो जाएगा और केवल प्रसन्नता ही शेष रहेगी लेकिन ऐसा होता नहीं है।

भूतकाल की याद एक दीमक है जो वर्तमान को खोखला कर देता है। यह याद करके कि हमने ऐसा किया होता तो यह हो जाता या कितना अच्छा अवसर था, हाथ से निकल गया। हमने उस समय अगर सही निर्णय लिया होता तो आज ऐसी खराब स्थिति में न होते। हम भूतकाल से क्या प्राप्त करते हैं यह तो ज्ञात नहीं, परन्तु अपना वर्तमान अवश्य बिगाड़ रहे हैं। हम कल्पना के आसमान पर ही उड़ते रहेंगे तो यथार्थ के धरातल पर कब उतरेंगे? कभी नहीं।

'बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेय।' जो बीत गया सो तो बीत गया। अब वह तो वापिस आने से रहा। चाहे उसका परिणाम अच्छा रहा हो या बुरा, वह तो हो चुका है। उसको याद करना तो गड़े मुर्दे उखाड़ने जैसा है। जो नहीं है जिसका अस्तित्व ही नहीं है, उसकी चर्चा-परिचर्चा करके अमूल्य समय नष्ट करना मूर्खता नहीं तो और क्या है? क्यों न नये उत्साह, नयी उमंग से, नयी योजनाओं को मूर्त रूप दें और नव-सृजन की प्रक्रिया को आगे बढ़ाएं? क्यों न इन स्वर्णिम क्षणों का उपयोग करें? स्वयं का भी कल्याण होगा, मानवजाति का भी कल्याण होगा।

यह एक विडम्बना ही है कि समय का सदुपयोग करने के स्थान पर, हम अक्सर बीते हुए समय के कारण वर्तमान में भोगी जा रही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति की चर्चा करते रहते हैं। क्या यह कभी हितकारी हुई है? नहीं न। फिर इस प्रकार की चर्चा में समय व्यर्थ क्यों करें? क्यों न एक प्रसन्नता भरे चित्त से, शांतचित्त से, वर्तमान की तरफ ध्यान दें। कहीं ऐसा न हो कि यह समय भी निकल जाए।

जो आज आज है, वही कल कल हो जाएगा। जो 'है' वह 'था' में बदल जाएगा। इसमें समय कहां लगता है। हर पल 'था' होता जा रहा है। हर पल भूतकाल में बदलता जा रहा है। वर्तमान तो सदा ही भूतकाल होता रहा है, हो रहा है, होता रहेगा। इसीलिए वर्तमान को वर्तमान समझकर ही कार्य करना सभी के लिए हितकारी होता है। कहीं ऐसा न हो कि हम सोचते ही रहें और 'अब पछताये होत का, जब चिड़िया चुग गयी खेत' वाली बात हो जाए।

सोचते रहने से कोई काम नहीं होता। उसके लिए कर्म भी करने पड़ते हैं। केवल कल्पनाओं में ही विचरण करते रहने से कोई उपलब्धि नहीं होगी क्योंकि कल्पना के तो केवल पंख होते हैं, कोई आधार तो होता नहीं है। कल्पना का काम तो केवल उड़ान भरना है और उसके लिए अनन्त आकाश है, दूर क्षितिज तक की सीमा रेखा भी उसके लिए कम पड़ती है।

कल्पना होती ही केवल भविष्य की है। कल्पना कभी भी भूतकाल की नहीं होती। वह तो केवल एक यथार्थ होता है जो बीत चुका होता है। चाहे वह अच्छा रहा हो, चाहे बुरा लेकिन वह समय तो गुजर चुका होता है। वह तो वापस लौटकर आ नहीं सकेगा। अत: उसके बारे में सोच-समझकर हम वर्तमान से भी चूक जायेंगे।

एक बहुत सुंदर वाक्य है–'बीते हुए कल की दुखद स्मृति और आने वाले कल की कल्पनामय खुशी में हम आज का स्वर्णिम वर्तमान नष्ट कर देते हैं।' यथार्थ भी यही है। क्या रखा है इन बातों की स्मृति में, जो बीत गयी। क्या लाभ होगा उनको याद करके, जो हमारे सामने नहीं है, किस प्रकार की योजना, कार्य या कर्म में हम लग सकेंगे सिर्फ उन बीतें क्षणों को याद करके? और भविष्य की कल्पना तो एक इन्द्रजाल है इससे निकलना मुश्किल होता है। यह तो मकड़ी के जाले की सी स्थिति की सर्जना करती है, जिससे निकलना बहुत मुश्किल होता है। जब हम काल्पनिक कहानियों में सत्यता ढूंढने लगते हैं, तब स्थिति विषम हो जाती है। कहावत सुनी होगी 'सूत न कपास जुलाओं में लट्ठम-लट्ठा।'

मानव जीवन का एक ही लक्ष्य है, अपने वर्तमान का सुधार। वर्तमान सुधर गया तो समझो सारा जीवन सुधर जायेगा, न भूतकाल का भय होगा, न भविष्य का कोई डर, जिस व्यक्ति ने अपना वर्तमान सुधार लिया, समझो उसने जीवन जीने का मूलमंत्र सीख लिया।

जिंदगी में तीन प्रकार के लोग होते हैं–उत्तम, मध्यम और निम्न। यों देखें तो व्यक्तिगत बनावट में कोई अंतर नजर नहीं आएगा, परन्तु व्यवहार में, सोच में, कार्यशैली में अंतर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होगा। निम्न स्तर के व्यक्ति कार्य आरंभ ही नहीं करेंगे। नाना प्रकार के नकारात्मक विचार उनके मस्तिष्क में आ जायेंगे। वे उस कार्य की सफलता के प्रति कभी विश्वस्त हो ही नहीं सकेंगे। अत: उसे करेंगे ही नहीं। मध्यम वर्ग के व्यक्ति कार्य के बारे में सतही तौर पर विचार करेंगे, शुरू भी कर देंगे, जहां कहीं कोई कठिनाई आयी कि उसे उसी स्तर पर, उसी रूप में उसी हाल में छोड़ देंगे। आगे बढ़ने की हिम्मत ही नहीं करेंगे। उत्तम विचार वाले व्यक्ति योजना पर गहराई से विचार-विमर्श करेंगे, उसके सभी पहलुओं पर ध्यान देंगे। कार्य शुरू करेंगे, बाधाएं आयेंगी तो उनको भी दूर करेंगे और अंत में सफलता प्राप्त करके ही रहेंगे।

मानव जीवन का एक ही लक्ष्य है, अपने वर्तमान का सुधार। वर्तमान सुधर गया तो समझो सारा जीवन सुधर जायेगा, न भूतकाल का भय होगा,

न भविष्य का कोई डर, जिस व्यक्ति ने अपना वर्तमान सुधार लिया, उसने समझो जीवन जीने का मूलमंत्र सीख लिया।

वर्तमान को सुखमय बनाने का एक मूलमंत्र है-किसी भी कार्य को, कभी भी अधूरा न छोड़िए और इसमें भी इसका बीजमंत्र है-आप उस कार्य को सबसे पहले पूरा कर लीलिए जो आपको अरुचिकर लगता हो। एक और मंत्र है, वर्तमान को सुधारने का, वह है कि 'देखा जाएगा' या 'फिर कर लेंगे' की विचारधारा से कभी भी प्रभावित मत होइए। यह भी भविष्य पर निर्भर होने की ही बात है।

दुनिया में व्यस्त वही है जो काम करता है, जिसे काम करना ही नहीं आता है वह कैसे व्यस्त रहेगा? और फिर व्यस्त रहने का सबसे बड़ा फायदा यह है कि जो व्यक्ति व्यस्त है, वह कभी आलसी नहीं होगा, उसके दिमाग में फालतू विचार आयेंगे ही नहीं। उसके लिए 'खाली दिमाग शैतान का घर' वाली कहावत, एकदम गलत हो जाएगी। उस व्यक्ति के मस्तिष्क पर 'यह काम पूरा नहीं हुआ है' या 'इसे करना शेष है' या 'अगर यह काम नहीं कर पाया तो क्या होगा' या हाय! मैं तो पिछड़ जाऊंगा-मेरा काम पहले ही नहीं निपटा है और यह नया काम और आ गया' का तनाव नहीं रहेगा।

वर्तमान में ही भविष्य रहता है, आने वाले कल के रूप में और वर्तमान में ही भूतकाल भी रहता है जो बीत रहा है, बीत जाने के बाद बीते हुए कल के रूप में। हर वर्तमान दोनों काल का परिचायक है परन्तु यथार्थ में तो एक ही काल है 'वर्तमान' क्योंकि जो बीत चुका है वह तो 'भूत' हो ही गया है, जो आया ही नहीं है, वह 'भविष्य' है अत: वर्तमान ही सत्य है। वर्तमान में ही जीना सीखें। वर्तमान को सुधार लें, वर्तमान को समझ लें, शेष सब तो अपने आप सुधर जाएगा। याद रखिए दस हजार गुजरे 'कल', एक 'आज' की बराबरी नहीं कर सकते। यह एक ध्रुव सत्य है कि हम अपने अधिकांश कष्टों को स्वयं आमंत्रित करते हैं। सुख भी मानवजनित है परन्तु इसकी प्राप्ति के लिए हमें अपने अंदर धैर्य एवं संतुष्टि की उत्पत्ति करनी होगी, प्रतीक्षा करनी होगी, जबकि दु:ख और कष्ट तो मानो हमारे निमंत्रण की प्रतीक्षा में रहते हैं। बस हमारा जरा-सा ईशारा हुआ और कष्ट हाजिर। भगवान बुद्ध ने कहा, भगवान महावीर का भी यही संदेश है, सभी संतों ने स्वीकारा है- 'संतोष सबसे बड़ा सुख है और असंतोष सबसे बड़ा दु:ख।'

एक कहावत भी है 'पाप का जन्मदाता लोभ।' यदि किसी में लोभवृत्ति नहीं होगी तो वह पाप करेगा ही क्यों? पाप करने की भावना उसके मन में आएगी ही नहीं। जब किसी वस्तु को प्राप्त करने की, दूसरों की वस्तु को अपने अधिकार में करने की, जो जितना प्राप्त है उससे अधिक पाने की लालसा, इच्छा या आकांक्षा बलवती हो उठती है, तभी पाप का उदय होता है। संसार में आज तक जितने युद्ध हुए हैं उनके मूल में एक ही शब्द रहा है और वह है 'लोभ'। यदि लोभ पर नियंत्रण किया जा सका होता, तो ये इतने विनाशकारी युद्ध, ये इतनी विभीषिकाएं शायद कभी जन्म न लेती। मानव ज्यादा सुखमय-सुरक्षित संसार में अपना जीवन बिता पाता।

जीवन में छोटी से छोटी कठिनाई भी स्वयं हमारे द्वारा आमंत्रित होती है। हम अगर किसी घटना विशेष का विश्लेषण करें तो हमें ज्ञात होगा कि उस घटना में, किसी न किसी प्रकार हमारा योगदान रहा है, चाहे वह प्रत्यक्ष रहा हो या अप्रत्यक्ष। किसी न किसी प्रकार हम उस घटना या घटनाजनित कष्ट को नियंत्रित कर सकने की स्थिति की सर्जना कर चुके थे, हम अपनी ही किसी वृत्ति से कोई ऐसा आधार बना चुके थे जिस पर वह खड़ी हो सकी है। किसी न किसी रूप में, कहीं भी, किसी से भी, हम जड़ चुके थे उसकी योजना में, तभी हमारे साथ वह घटना घटी है। यह संसार का नियम है कि बिना किसी कारण के कुछ घटित नहीं होता। हर घटना, कार्य या व्यवहार किसी न किसी कारण से प्रेरित होता ही है और इस प्रकार की प्रेरणा जिसे हम सकारात्मक या स्वस्थ सोच की प्रेरणा नहीं कह सकते, ज्यादातर लोभ के वशीभूत ही होती है।

यह संसार का नियम है कि बिना किसी कारण के कुछ घटित नहीं होता। हर घटना, कार्य या व्यवहार किसी न किसी कारण से प्रेरित होता ही है और इस प्रकार की प्रेरणा जिसे हम सकारात्मक या स्वस्थ सोच की प्रेरणा नहीं कह सकते, ज्यादातर लोभ के वशीभूत ही होती है।

कष्टों से छुटकारा पाना भी प्राय: इंसान के हाथ में ही होता है। अगर व्यक्ति हर कष्ट के कारण को जान ले तो उससे छुटकारा पाने का उपाय भी सोचा जा सकता है। जब कष्ट के होने का कारण हो सकता है तो उसके न होने या न रहने का भी कारण अवश्य हो सकता है। कष्टों से केवल उस स्थिति में छुटकारा नहीं पाया जा सकता है जब हम मानसिक अज्ञान के कारण, राग की अधिकता के कारण उसे, उस सत्य को स्वीकारना ही नहीं जानते हैं या नहीं चाहते हैं।

कुछ कष्ट आते हैं तो मनुष्य परेशान हो उठता है। कुछ उसकी कल्पना के उपज ही होते हैं, वे वास्तव में होते नहीं है। मनुष्य केवल यह सोच लेता है कि ये कष्ट भी आ सकते हैं और उनके आ सकने की कल्पना ही उसे बेचैन कर देती है। वह उन आये कष्टों के कारण स्वयं को दुखी बना लेता है।

कभी-कभी यह भी होता है कि बहुत साधारण-सी बात एक हौवा-सा बन जाती है। बात को इतना बढ़ा-चढ़ा कर इतने भयानक रूप से पेश कर दिया जाता है कि वह भयावह स्थिति की सर्जना कर देती है।

कष्ट आते भी हैं, कष्ट जाते भी हैं। जो भी कष्ट आया है, वह स्थायी तो नहीं रहेगा। इसलिए अगर हम कष्टों से सामना करना सीख जाएं तो कष्टों को जाना ही होगा। अगर हम यह मानसिकता बना लें कि हमें कष्टों को दूर करना ही है तो कोई भी कष्ट हमें परेशान नहीं कर सकता। कष्ट भी किसी न किसी कारण से ही होते हैं। बिना कारण के तो कोई भी कार्य नहीं होता। अगर हमें कारणों का पता लग जाये तो क्या कारण है कि वे दूर नहीं हो सकते या फिर हम उनसे मुक्ति नहीं पा सकते? समस्या है तो समाधान भी है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कई कष्ट या कई समस्याएं एक साथ आ जाती हैं। ऐसे में हमें यह नियम बना लेना चाहिए कि हम उन सारी समस्याओं पर एक दृष्टि डालने के पश्चात उनकी एक सूची बना लें और उनमें से जो कष्ट हमें सबसे कम पीड़ादायक, दुखदायक या अशांतिदायक लगता हो, उससे सबसे पहले निपट लें, क्योंकि कष्ट चाहे छोटा हो या बड़ा, मानसिक रूप से वह तब तक जुड़ा रहता है जब तक उससे मुक्ति न मिल जाए।

कष्टों की ज्यादातर उत्पत्ति या तो भ्रम या संदेह के कारण ही होती है। कुछ शारीरिक कष्टों को छोड़कर, ज्यादातर कष्ट तो उदासीनता से जुड़े हुए होते हैं। जब हम अपने मन में एक दृढ़ विश्वास बना लेंगे तो हमें हमारे कष्टों से मुक्ति मिलनी शुरू हो जाएगी। सिर्फ इतना याद रखें, हमें कष्टों को आमंत्रित नहीं करना है। ■

महिमा

किशन धीरज

राम नाम की महिमा

राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहते हैं। पुरुष+उत्तम यानी जो उत्तम पुरुष की मर्यादा में हो। राम के जीवन चरित्र को कहीं से भी देखें, सब कुछ मानवीय या मानवोचित्त लगता है। वे कहीं से भी दैविक या अवतार नहीं लगते। उन्होंने चमत्कार नहीं बतलाएं तथापि चमत्कृत कर देने वाले कार्य किए।

रावण ने राक्षसों, देवताओं, यक्ष, गंधर्वों द्वारा नहीं मरने का वरदान ब्रह्माजी से ले रखा था। रावण चूंकि उस वक्त अपने सामने मानवशक्ति को तुच्छ मानता था। इसलिए उसने ब्रह्माजी से मानव से नहीं मरने का वरदान नहीं मांगा था। इधर राम की विवशता थी वे मानव बनकर ही इसे मार पायेंगे और एक पुरुष की मर्यादा में रह वे रावण का वध कर पाए।

राम ने अपने जीवनकाल में कई राक्षसों का अंत किया। कई भक्तों का उद्धार किया। उस वक्त के समाज व ऋषि समूहों में व्याप्त आंतक और कष्टों को दूर किया। समाज में शांति व सहअस्तित्व की पुनर्स्थापना की। राम के राज्य में कोई दु:खी, रोगी नहीं होता था। किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती थी। पिता के रहते बेटा नहीं मरता था।

राम के राज्य में सब सुखी थे। राम के उज्ज्वल जीवन चरित्र से राम के नाम की महिमा और बढ़ गई। लोकमानस की आस्था और विश्वास और प्रगाढ़ हो गए। रत्ना डाकू राम का उल्टा नाम लेकर वाल्मीकि ऋषि बन गए।

आज भी राम का नाम लोक-जीवनचर्या में व्याप्त है। कमजोर व अशक्त व्यक्ति अक्सर उठते-बैठते राम का नाम लेता है, कहता रहता है. ..हे राम! ताकत का गर्व राम का नाम नहीं लेता है।

किसी भले आदमी से बुरा काम हो जाए तो वह कहता है, 'मैं क्या करता, मुझमें से राम निकल गया।' अर्थात् जब तक उसमें राम मौजूद रहेंगे तब तक उससे बुरा काम नहीं हो सकता। राम बाहर निकले कि उससे बुरा काम हुआ।

मेवाड़ में एक दार्शनिक संत हो गये, उनका नाम चतर सिंहजी था। मेवाड़ी बोली में उन्होंने कहा है, 'सीधे रस्ते चालने करे जो आच्छा काम, आठ पहर वारें कने हाजिर रेसी राम।' अच्छा काम करना राम की भक्ति है।

आज दुनिया में जो यहां-वहां बुरे कर्मों की भरमार है, उससे प्रमाणित होता है कि आज लोगों के तन से राम निकल गया है। यदि हमें बुरे काम रोकने हैं तो राम को अपने भीतर प्रतिष्ठित करना होगा।

संसार में आज अनेकों संत, महात्मा अपने प्रवचनों में लोगों को राम के नजदीक जाने के उपक्रम बतला रहे हैं। ताकि दुष्ट प्रवृत्तियों का नाश हो व समाज की सुख-शांति बढ़े।

धरती पर भगवान राम के अतिरिक्त श्रीकृष्ण, शंकर, हनुमान आदि के कई अवतार हुए हैं, किन्तु मनुष्य की अंतिम यात्रा के समय राम नाम सत्य ही क्यों उच्चारित किया जाता है? श्रीकृष्ण, शंकरादि नाम क्यों नहीं लेते? शायद राम के नाम का गुण और प्रभाव ही लोगों को अधिक हितकारी लगा और मान्य हुआ।

राम-नाम के प्रभाव से कई भक्तों ने अपना व समाज का कल्याण किया। कबीरदासजी ने अपने जीवन को पूर्ण राममय बना लिया था। वे सब कुछ भी काम राम के लिए करते थे, चादर भी राम के लिए बुनते थे। कबीरदास के इंतकाल पर दो वर्गों में झगड़ा तन गया। एक वर्ग अग्नि संस्कार करना चाहता था, तो दूसरा वर्ग दफनाना चाहता था। बात बढ़ते हुए विलम्ब हो गया। बाद में कफन उठा कर देखा तो उनकी देह मृत काया न रही, पुष्पों के ढेर में तब्दील हो गई। दोनों वर्गों ने पुष्प आपस में बांट लिए। कबीर ने उस वक्त की गलत मान्यताओं को ललकारा था और राम-नाम की प्रतिष्ठा पुन: प्रतिष्ठित करवाई।

तुलसीदासजी ने कहा है, 'कलयुग केवल नाम अधारा, सुमरि-सुमरि नर उतरहिं पारा।' कलयुग में मनुष्य केवल राम के नाम से तिर जाता है। ईश्वर प्राप्ति हेतु कठिन तप की आवश्यकता नहीं है कलयुग में।

सेतुबंध पुल बनाने में प्रयुक्त जड़ पत्थर जब नल-नील के द्वारा एक राम लिखने से तिर जाते हैं तो मनुष्य तो चेतन है। वह क्यों नहीं तिरेगा? प्रयास तो करें अपने भीतर राम का नाम लिखने का।

–सूरजपोल बाहर
कांकरोली-313324 (राजस्थान)

वास्तु की मदद से ऐसे करें दूर तनाव

- मकान का उत्तर-पूर्व कोना कटा हुआ न हो। इससे उन्नति में रुकावट, संतान व धन संबंधी चिंता हो सकती है।
- उत्तर-पूर्व में शौचालय होगा तो आपके परिवार को रोग घेरे रहेंगे।
- उत्तर-पूर्व में यदि नव-दंपति या वयस्कों का शयनकक्ष है, तो वंशवृद्धि में रुकावट या संतान में मानसिक व शारीरिक अपंगता आ सकती है।
- उत्तर-पूर्व में यदि सीढ़ियां हैं तो स्वास्थ्य व धन की हानि हो सकती है या इस बाबत चिंता बनी रह सकती है।
- उत्तर-पूर्व कोने को खुला, हल्का तथा साफ-सुथरा रखें। इसमें नाम यश व प्रसिद्धि मिलती है।
- पूरे घर के पानी की निकासी उत्तर-पूर्व में होनी चाहिए। इससे आप व्यर्थ के तनाव से बचे रहेंगे।
- उत्तर-पूर्व में तुलसी का पौधा रखा जा सकता है। छोटे पौधे तथा फूलों वाले पौधे रखे जा सकते हैं।

विश्लेषण

सीताराम गुप्ता

स्वर्ग-नरक की कल्पना

मनुष्य की कल्पनाओं में ईश्वर और स्वर्ग-नरक की कल्पना सबसे रोचक और महत्त्वपूर्ण है। प्राय: सभी धर्मों में स्वर्ग की कल्पना कमोबेश एक खूबसूरत उद्यान के रूप में मिलती है जहां ऐशो-आराम की सभी चीजें मौजूद हैं। इस स्वर्गोद्यान में कलकल कर बहते झरने और नहरें हैं तो इन झरनों और नहरों के किनारे बनी क्यारियों में महकते हैं रंग-बिरंगे, सुगंधित, मनमोहक व आकर्षक फूल। यहां चारों ओर लगे हैं खूबसूरत पेड़ जो सदैव स्वादिष्ट और रसीले फलों से लदे रहते हैं। इसी स्वर्गोद्यान में अप्सराएं हैं, परियां हैं, हूरें हैं तथा और भी न जाने क्या-क्या हैं जिसे मनुष्य की कल्पना ने यहां संजोया है। यदि आप इस स्वर्ग को देखना चाहें या वहां स्थाई रूप से निवास करना चाहें तो वह भी संभव है लेकिन मात्र मृत्यु के उपरांत।

प्रश्न उठता है कि हम जिस स्वर्ग की खोज में रहते हैं वह स्वर्ग कहां है? क्या वह इस धरती पर ही स्थित है अथवा हमारी दृष्टि से परे कहीं अन्यत्र? क्या स्वर्ग का संबंध मृत्यु से है? क्या इस भौतिक देह का अवसान ही मृत्यु है? मृत्यु वास्तव में क्या है? वह कौन सी मृत्यु है जिससे स्वर्ग की प्राप्ति संभव है? ईसा कहते हैं, ''मैं बार-बार यही कहूंगा कि जब तक मनुष्य दोबारा जन्म नहीं लेगा वह ईश्वर का साम्राज्य नहीं देख पाएगा।'' अर्थात् पुनर्जन्म ही स्वर्ग का द्वार है। स्वर्ग के लिए अनिवार्य है मृत्यु। लेकिन किसकी मृत्यु?

इस भौतिक देह की मृत्यु या इस भौतिक देह के अंदर व्याप्त मन में समाए नकारात्मक घातक विचारों की मृत्यु? जहां तक भौतिक देह की मृत्यु अथवा देहावसान के बाद स्वर्ग या नरक की प्राप्ति की बात है वह बेमानी है क्योंकि इस शरीर के नष्ट हो जाने के बाद स्वर्ग या नरक की अनुभूति को बतलाने के लिए कोई उपाय नहीं। ईसा जब कहते हैं कि मनुष्य जब तक दोबारा जन्म नहीं लेगा वह ईश्वर का साम्राज्य नहीं देख पाएगा तो उनके कहने का तात्पर्य भौतिक देह के पुनर्जन्म से नहीं अपितु नकारात्मक घातक विचारों की मृत्य के उपरांत मन में सात्त्विक भावों की सृष्टि से ही है।

जब तक हम नकारात्मक घातक विचारों से भरे रहते हैं हम अधिभौतिक, अधिदैविक तथा आध्यात्मिक तीनों प्रकार की व्याधियों से पीड़ित रहते हैं और यही जीते जी का नरक है। मन की उचित कंडीशनिंग अर्थात् मन में व्याप्त नकारात्मक घातक विचारों से मुक्ति ही स्वर्ग का सोपान है। मन की मृत्यु अर्थात् मन पर पूर्ण नियंत्रण द्वारा ही मन में सकारात्मक विचारों अथवा भावों की स्थापना संभव है। यही वास्तविक मृत्यु अथवा पुनर्जन्म है। मन में सकारात्मक भावों की सृष्टि ही स्वर्ग की सृष्टि है।

जब तक हम नकारात्मक घातक विचारों से भरे रहते हैं हम अधिभौतिक, अधिदैविक तथा आध्यात्मिक तीनों प्रकार की व्याधियों से पीड़ित रहते हैं और यही जीते जी का नरक है। मन की उचित कंडीशनिंग अर्थात् मन में व्याप्त नकारात्मक घातक विचारों से मुक्ति ही स्वर्ग का सोपान है। मन की मृत्यु अर्थात् मन पर पूर्ण नियंत्रण द्वारा ही मन में सकारात्मक विचारों अथवा भावों की स्थापना संभव है।

एक कथा याद आ रही है। एक व्यक्ति था तो थोड़ा धार्मिक प्रवृति का लेकिन अत्यंत अहंकारी भी। उसकी इच्छा थी कि इस जन्म में चाहे जो करना पड़े लेकिन मरने के बाद स्वर्ग अवश्य मिले इसलिए अनेकानेक संत-महात्माओं के पास जाता और उनकी सेवा कर स्वर्ग जाने का उपाय पूछता। लोग जैसा बताते वैसा करता। गरीबों की सेवा करता और दान-दक्षिणा देता। वह अपनी कमाई का अधिकांश भाग परोपकार में ही लगा देता था क्योंकि उसे उम्मीद थी कि ऐसा करने से स्वर्ग की प्राप्ति निश्चित है। लेकिन जैसे-जैसे उसकी परोपकार की भावना का विकास हो रहा था वैसे ही उसमें अहंकार की भावना भी बढ़ती ही जा रही थी। उसकी दानशीलता पर कोई टीका टिप्पणी कर देता तो उसके क्रोध की सीमा न रहती।

एक बार एक प्रसिद्ध संत उसके घर के पास आकर रुके तो वह फौरन उनकी सेवा में उपस्थित हो गया और उनसे भी स्वर्ग जाने का उपाय पूछा। साथ ही अपने स्वर्ग जाने के प्रयासों की चर्चा भी उनसे की। संत ने उस व्यक्ति को ध्यानपूर्वक ऊपर से नीचे तक देखा और उपेक्षा से कहा ''तुम स्वर्ग जाओगे? तुम तो किसी नीच कुल के व्यक्ति दिखलाई पड़ रहे हो। तुम परोपकारी या दानी व्यक्ति नहीं कोई व्यापारी या धर्म के ठेकेदार ज्यादा लग रहे हो।'' इतना सुनते ही वह व्यक्ति क्रोध से भर उठा और संत को मारने के लिए डंडा उठा लिया। संत ने मुस्कराते हुए पूछा, ''तुम में तो तनिक भी धैर्य नहीं। इतनी अधीरता और अहंकार के होते हुए तुम स्वर्ग कैसे जा पाओगे?''

व्यक्ति को संत की कही हुई बातों का मर्म समझ में आया तो वह संत के चरणों में गिरकर अपनी गलती के लिए क्षमा मांगने लगा। आगे से क्रोध न करने तथा अहंकार वृत्ति के त्याग का भी प्रण किया। ''यही है स्वर्ग का उपाय है,'' संत ने कहा। ''एक-एक कर सब अवगुणों से मुक्त हो जाओ। जिस दिन विकारों से मुक्त हो जाओगे उसी दिन स्वर्ग की सृष्टि हो जाएगी और यहीं पर हो जाएगी।''

वास्तव में स्वर्ग की प्राप्ति तभी संभव है जब इस जीवन में अच्छे-अच्छे कर्म किए जाएं। अब अच्छे कर्मों से क्या तात्पर्य है? वास्तव में कर्म की उत्पत्ति भाव या विचार से होती है। जैसे हमारे भाव या विचार होंगे वैसे ही कर्म होंगे। जिस प्रकार हम सुंदर पेड़-पौधे और फल-फूल उगाकर इस धरती पर स्वर्ग की रचना करने में सक्षम होते हैं उसी प्रकार मन में सकारात्मक भावों की सृष्टि द्वारा हम जीते जी स्वर्ग की रचना ही तो करते हैं। वास्तविक स्वर्ग तो हमारे मन में होता है। हम इस जीवन में अच्छे कर्म करें तथा अनुशासित रहें जिससे न केवल हम अपितु पूरा समाज लाभान्वित हो सके इसीलिए एक काल्पनिक स्वर्ग की रचना की गई है।

-ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा,
दिल्ली-110034

महावीर जयंती

महावीर की दृष्टि में सर्वोदय

गणेश मुनि शास्त्री

समाज सुधारक विनोबा भावे का आंदोलन सर्वोदय, जाना-पहचाना आंदोलन था। उनके भूदान यज्ञ में अधिक भूमि वालों से धरती का दान मांगकर भूमिहीनों को भूमि दी गई। इससे निर्धन और खेतिहर मजदूरों को कुछ राहत तो मिली, पर यह सर्वोदय एक शब्द में सिमटकर रह गया। इससे हजारों वर्ष पूर्व महावीर ने हमको, आपको और सबको सर्वोत्कृष्ट की दृष्टि दी। तब समाज में मिथ्यात्व और अज्ञान का अंधकार था। मानों महावीर के सूर्य का उदय हुआ और हर घर, हर हृदय का अंधकार दूर हुआ था।

उस युग में अधर्म ही धर्म था। संस्कृति का स्थान विकृति ने ले लिया था। नारी का सम्मान नहीं था, अपितु उसका घोर असम्मान था। उसे भेड़-बकरी की तरह बेचा और खरीदा जाता था। चम्पा की राजकुमारी पहले एक वेश्या को बेची गई, फिर उसे एक श्रेष्ठी धनवाहन ने वेश्या से खरीद लिया। श्रेष्ठी की पत्नी मूला ने उसके पैरों में बेड़ी डाली और तलघर में बंद कर दिया।

महावीर ने छह महीने तक आहार का त्याग समाज को दृष्टि देने के लिए किया। सबकी आंखें खुली। राजा शतानीक और रानी मृगावती की आंखें खुली। समाज त्राहि-त्राहि कर उठा। वह राजकुमारी चंदना कहलाई। उसकी बेड़ियां तो कटी, पर महावीर ने उसे एक समर्थ साधन धर्म का दिया, जिससे वह कर्म के बंधनों को काट सकी, वह जन्म-मरण से मुक्त होकर नारीजगत् को एक दिशा दे गई। नारी जागरण का जैसा बिगुल महावीर ने बजाया, कदाचित् किसी और ने बजाया हो।

उनके युग में सभी को मुक्त होने का अधिकार नहीं था। यज्ञों में बलि देने को धर्म माना जाता था। कैसा भयावह वातावरण था महावीर के युग में। चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा था। मानो लोग दृष्टिहीन थे। राजा प्रजा को उचित अनुकरण नहीं दे पा रहे थे। राजा-प्रजा दोनों की आंखों के सामने मोह और मिथ्यात्व का मोटा परदा था। परदे के पार देखने की सामर्थ्य किसी में नहीं थी। परदे को हटाये बिना एक का उदय संभव नहीं था, फिर सर्वोदय की बात तो बहुत दूर थी।

कल्पना करो कि आपके सामने एक परदा है। उसमें एक छोटा-सा छेद कर दिया जाता है। उस छेद में से आप परदे के बाहर थोड़ा-सा देख सकते हैं। पर छिद्र कुछ बड़ा होता है तो सामने का दृश्य भी कुछ अधिक फैलकर दीखेगा। जब यह छेद पूरे परदे में व्यापक हो जाता है, तब आप सब कुछ स्पष्ट देख सकते हैं।

यहां तुममें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। तुम जो थे, जैसे थे, वही रहे, वैसे ही रहे। ज्यों-ज्यों छिद्र का क्रमिक विकास होता रहा, उसके साथ ही क्रमशः तुम्हारी अभिव्यक्ति भी बढ़ती रही।

आत्मा के संबंध में भी यही बात है। तुम पहले से ही मुक्त स्वभाव और पूर्ण हो। तुम्हें प्रयत्न करके पूर्णत्व को मिलाना नहीं है। वह तो मिला हुआ है, केवल परदे के छिद्र को व्यापक करना है।

महावीर ने यही किया। उन्होंने सर्वज्ञता प्राप्त की, सर्वदर्शी और सर्वसमर्थ बने। वे केवली बने। उनके सामने कोई परदा नहीं था। अब उन्होंने सबके सामने लगे परदे में छिद्र किया और उसे क्रमशः बड़ा करते गए। इससे उनकी सर्वोदयी दृष्टि का विस्तार होता गया। उन्होंने जीवमात्र का कल्याण सोचा। उनकी दृष्टि मनुष्यों के कल्याण से भी ऊपर थी। उनका 'सर्व' मनुष्य नहीं था, पशु-पक्षी, तिर्यंच, नारकी, देव सभी उनकी उदय दृष्टि में थे।

भगवान महावीर ने अपने जो चार धर्मतीर्थ बनाये-उनमें उन्होंने कोई भेदभाव नहीं रखा। वहां हरेक जा सकता था। स्त्रियों के लिए उन्होंने श्रमणी और श्राविका- दो तीर्थ बनाये। चोर-डाकू, दुराचारी, चाण्डाल, वधिक, दास-दासी सभी के लिए आत्मोद्धार के द्वार उन्होंने खोले। उनका धर्म ऊंचे आकाश का मेघों से रहित सूर्य था, जिसकी किरणें सभी पर समान भाव से पड़ती हैं। पवित्र-अपवित्र सभी का स्पर्श सूर्य करता है, वह अपावनों की अपावनता सोखकर भी स्वयं अपावन नहीं होता, क्योंकि सूर्य समर्थ है-

भानु कृसानु सर्व रस खाहीं।
तिन्ह कहं मन्द कहत कोउ नाहीं।।

सूर्य और अग्नि सभी रसों को सोखते हैं- नष्ट कर डालते हैं, पर इनको कोई मंद- निकृष्ट नहीं कहता। महावीर के धर्म की यही गति थी। वह समर्थ था और समर्थ है। सभी के उद्धार की सामर्थ्य महावीर के धर्म में थी और है। महावीर ने सबको यह दृष्टि दी कि तुम किसी के आश्रित या मुंहताज नहीं हो। तुम स्वयं ही अपना उद्धार करोगे। तुम्हारा कल्याण कोई दूसरा नहीं कर सकता। हाथी को हाथी ही दलदल से निकाल सकता है। मूषक और कुत्ते तथा आदमी हाथी को नहीं खींच सकते। जो आत्मा स्वयं तिर चुकी है, वही दूसरी आत्मा को भी तिरा सकती है।

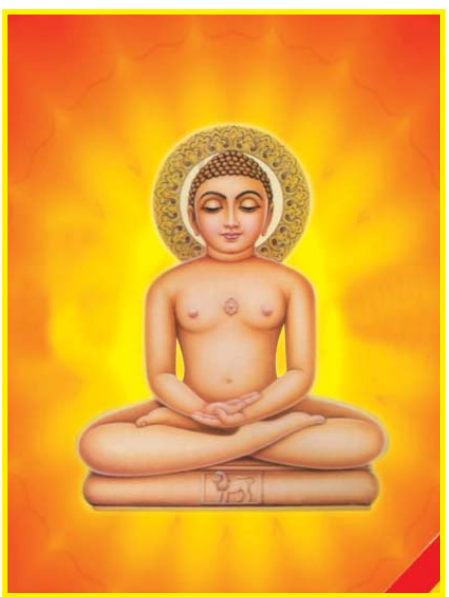

हाथी का दृष्टांत यों है। एक हाथी दलदल में फंस गया। वह निकल नहीं पा रहा था। मूषकों ने उसे दलदल में फंसा देखा तो एक मोटा रस्सा उसके पैरों में बांध दिया। उसे खींचा, पर भला वे एक हाथी को कैसे खींच पाते। फिर वे एक कुत्ते को ले आए। कुत्ता भी असमर्थ रहा। कुत्ता एक मनुष्य को ले आया। हाथी को खींचने की शक्ति मनुष्य में भी नहीं थी। मनुष्य एक दूसरा हाथी ले आया। रस्से का दूसरा छोर हाथी के पैर से बांधा और उसे भगाया तो उसने बल लगाकर दलदल में फंसे हाथी को बाहर निकालकर किनारे पर ला दिया। हाथी को हाथी ही निकाल सकता था, सो उसने निकाला।

महावीर ने श्रमण संघ के संतों को यह सामर्थ्य दी कि वे दूसरे मुमुक्षुओं को तार सकें। इस तरह महावीर की दृष्टि चराचर जगत् के उद्धार की सर्वोदयी दृष्टि थी। वे सर्वोदय के प्रतीक थे। उनका सर्वोदय आज भी प्रशस्त है। आज के भोग संस्कृति वाले युग में महावीर की दृष्टि अहिंसा के समर्थ आलोक से सुख-शांति का मार्ग प्रशस्त करने में समर्थ है। ■

चिंतन

अशांति में शांति की खोज

नीलम जैन

भगवान बुद्ध के पास एक जिज्ञासु पहुंचा और बोला– आप अनेक वर्षों से सद्धर्म का प्रचार कर रहे हैं और अनेक लोग आपको सुनते हैं। फिर क्या कारण है कि कुछ लोग ही उसे वास्तव में आत्मसात कर पाते हैं? सभी श्रोता उस शांति और आनंद को क्यों नहीं प्राप्त कर पाते? बुद्ध मुस्कराए और बोले– तुम नगर में जाओ और अपने मित्रों, परिवारजनों तथा परिचितों से पूछो कि वे जीवन में क्या चाहते हैं?

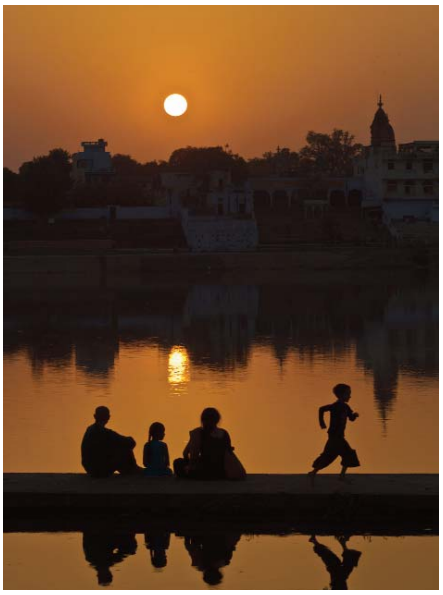

जिज्ञासु ने आज्ञा का पालन किया। वह नगर में अपने सभी संबंधियों, मित्रों व परिचितों के पास गया और सभी से एक-एक करके पूछने लगा, आप जीवन में क्या चाहते हैं? जिसने जो बताया वह लिखता चला गया। शाम होते-होते वह लगभग दो सौ लोगों से पूछताछ कर चुका था। उसने अपनी लेखन बही का विश्लेषण किया तो पाया कि कोई धन चाहता है, किसी को पुत्र की कामना है, कोई गृह निर्माण करना चाहता है, कोई व्यापार में सफलता चाहता है, किसी को विवाह की चिंता है, तो कोई यश की कामना करता है। पता नहीं कितने तरह की कामनाएं थीं। वह जिज्ञासु चकराया, उस सूची में किसी ने भी नहीं कहा कि उसे सत्य की या शांति की कामना है।

वह व्यक्ति बुद्ध के पास लौट आया और बोला, मैं अनेक लोगों से मिला और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि सभी को संसार की ही कामना है। किसी को भी सत्य की, धर्म की या शांति की कामना नहीं है।

बुद्ध मुस्कराए और बोले, मैं तुमको यही समझाना चाहता हूं कि जब तक मनुष्य के जीवन में शांति की, सत्य प्राप्ति की चाह खुद नहीं होगी, तब तक वह उसके लिए प्रयत्न भी नहीं करता। सत्य यह है कि हम कहते जरूर हैं कि हमें शांति चाहिए, पर प्रयास तो सब अशांति के लिए है। उन कामनाओं के लिए है, जिनका शांति से कोई सरोकार नहीं है।

स्मरण रखना चाहिए कि जब हम किसी आकांक्षा को हृदय में जन्म देते हैं, तो उसी क्षण से हम उस वस्तु या कार्य विशेष से अपना संबंध स्थापित कर लेते हैं। और जितनी तीव्रता से उस आकांक्षा के लिए विवेकयुक्त प्रयत्न करते हैं, उतनी ही जल्दी हम उसे प्राप्त कर लेते हैं– बशर्ते हमारी आकांक्षा में साहस हो।

यह संसार भावनाओं की चित्रशाला है। जिस प्रकार की हमारी इच्छाएं होती हैं, उसी प्रकार के अवरोधों-विरोधों को अपनी झोली में बटोरते हुए हम अपने पथ पर चलते हैं। आत्मशक्ति का प्रखर तेज प्रत्येक प्राणी के भीतर है, पर सांसारिक आकर्षणों में फंसा मनुष्य इसे धीरे-धीरे धुंधला कर देता है। पर ऐहिक कामनाओं से विरक्त व्यक्ति इस आभा को हजार गुणा कर अपने संपर्क में आने वालों के प्रभामंडल को भी चमका देता है। जो वास्तव में शांति का इच्छुक है वह मान-सम्मान, पूजा-प्रतिष्ठा, यश-कीर्ति जैसी भ्रांतियों में नहीं भटकता, न ही वह स्वार्थ की दीवारों में ही कैद होता है।

वस्तुतः हम अपनी अशांति, दुख और व्याधियों आदि का जितना प्रचार करते हैं, उतना उपचार नहीं करते। यदि कुछ करते भी हैं, तो व्याधि कुछ और है और उपचार कुछ और। हमें न हमारे रोग का पता है, न निरोग रहने का। यही कारण है कि हम अपने भीतर न सद्गुण प्रस्फुटित कर पाते हैं, और न ही सद्गुणी बनकर व्यवहार कर पाते हैं। यदि सचमुच हमें शांति और शाश्वत सुख की अभिलाषा है, तो हमें साधनों की सघनता के लिए नहीं, साधना हेतु सजगता से प्रयासरत रहना होगा। अपने को जानना सबसे बड़ी साधना है। हमारे धर्मग्रंथों में लिखा है कि लाखों मनुष्यों में एक होता है जो अपने को जानने का यत्न करता है। और उन यत्न करने वालों में भी कोई एक होता है जो स्वयं को पहचान पाता है। हमारी प्रवृत्तियां उस जलधारा की तरह होती हैं, जिसे नियंत्रण में लाकर खेत सींचे जा सकते हैं, बिजली पैदा की जा सकती है। लेकिन वही अनियंत्रित रहकर बड़े-बड़े नगरों को भी बर्बाद कर सकती है। ■

घोड़े की नाल से टोटके

किसी घोड़े के खुर से निकली लोहे की नाल में अद्भुत व चमत्कारी शक्ति होती है। प्रायः यह नाल शनि दोष दूर करने के काम में ली जाती है। घर के वास्तु दोष दूर करने में भी यह सहायक है।

दरिद्रता नाशः अपने घर के मुख्य द्वार पर लोहे की नाल घर में प्रवेश करते वक्त बायीं ओर के हिस्से में द्वार के ऊपर लगाने से घर से दरिद्रता भाग जाती है। जैसे गधे के सिर से सींग। यह नाल शनिवार को ही दोपहर में लगाना चाहिए। एक बार लगाने के बाद सालों साल चलती है, बदलने की जरूरत नहीं है।

वास्तु दोष निवारणः घर के वास्तु दोष को दूर करने, घर में सुख समृद्धि एवं परिजन, कुटुम्ब की बाधा दूर करने के लिए लोहे की नाल घर की छत पर किसी ऊंचे स्थान पर लगाएं ताकि दूर से नजर आ सके।

दुकान चलाने के लिएः अगर दुकान चलती-चलती बंद होने के कगार पर पहुंच रही हो तो दुकान के मुख्य द्वार के ऊपर बीचोंबीच लोहे की नाल लगानी चाहिए। इसमें वार शनि या मंगल कोई भी हो सकता है। दोपहर के ठीक सवा बारह बजे से साढ़े बारह बजे के भीतर लगाना श्रेष्ठ है।

सावधानियांः लोहे की नाल घोड़े के पांव से फिसल कर गिरी हुई सड़क पर मिले तो उत्तम है। खरीद कर लाएं तो उसे ब्राह्मण के द्वारा अभिमंत्रित कराकर फिर मुहूर्त पूछकर लगाएं।

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध हैः
www.sukhiparivar.com
www.herenow4u.net
www.checonjainam.org

परमात्मा पर विश्वास करना सीखें

● योगीराज पायलट बाबा ●

इस संसार में सफलताएं हैं तो असफलताएं भी, फूल हैं तो कांटे भी। जो कर्महीन है, आज चारों तरफ वे ही नजर आते हैं। ऐसे लोग परमात्मा को भी गाली देने से नहीं चूकते, जबकि परमात्मा ने हमारे लिए आनंद के फूल खिलाए, जग को इतना सुंदर बनाया, लेकिन हमने उसकी सारी कृति ही नष्ट कर डाली। इसके लिए हम स्वयं दोषी हैं। हमने अपने शरीर व जवानी को नष्ट कर दिया। हमने सब कुछ गंवा दिया और आज कहते फिरते हैं कि परमात्मा ने मेरे साथ अन्याय किया है। हालांकि परमात्मा तो न्याय करने के लिए बैठा है, वह अन्याय कर ही नहीं सकता। यदि आप एक कदम बढ़ाते हैं, तो वह बीस कदम बढ़ाता है लेकिन आप थोड़ी भक्ति तो दिखाइए। यदि आप उस पर आस्था न रखें, विश्वास न रखें तो वह क्या कर सकता है? आप उसे गाली देते हैं, उसकी निंदा करते हैं, फिर यह कैसे संभव है कि वह आपसे प्यार करे। आपने कभी उसके प्रति आदर का भाव दिखाया? यदि आपकी ओर से एक कदम भी नहीं उठेगा, तो वह आपकी तरफ दस कदम कैसे उठाएगा?

जीवन में सफलता हर कोई चाहता है, लेकिन इसके लिए प्रयास भी जरूरी है। आपके सामने भोजन की थाली रखी हो, लेकिन बिना प्रयास के आप उसे ग्रहण नहीं कर सकते? चांदनी रात हो और आप कमरे में बंद हो, तो आप इसका आनंद कैसे ले पायेंगे?

आप उस परमात्मा पर अविश्वास करते हैं जिसने सूर्य, चंद्र व पृथ्वी को बनाया और आज तक चला रहा है। उसकी कृति को आप देख रहे हैं, लेकिन आप उस पर विश्वास नहीं करते, तो अपने ऊपर विश्वास कैसे करेंगे? परमात्मा पर विश्वास करना सीखें, तो आपको अपने ऊपर भी विश्वास हो जाएगा। यह शरीर आपको नष्ट करने के लिए नहीं मिला है। यह तो अमृत कलश के समान आपके पास है, इसका पान करें। स्व-कर्म में लगें। दूसरे की सफलता देखकर जलने से कुछ नहीं मिलेगा, यह हमारी एक बड़ी कमजोरी है। हमारी कोशिश यह होती है कि उसे नीचे की ओर कैसे ढकेलें। उसे नीचे ढकेलने के लिए हम जितना प्रयास करते हैं, उतना यदि अपने उत्थान के लिए करें, तो हमारा जीवन सफल हो जाएगा, लेकिन हम ऐसा नहीं करते। हम दूसरे को देखते रहते हैं।

क्या हमने केवल दूसरे की बातें सुनने, देखने व बुराई करने के लिए जन्म लिया है? क्या आप उसकी बुराई को खत्म कर देंगे? अच्छा होगा कि आप अपनी बुराई को दूर करें। जिस दिन आप इसमें सफल जो गए, समझें कि परमात्मा के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए तैयार हो गए। यदि आपके हाथ मैले हैं तो आप दूसरे की सफाई कैसे करेंगे? दूसरों की निंदा करने से आपको क्या मिलेगा? आप तो अपनी निंदा करें व बुराइयों को दूर करने का प्रयास करें। निंदा करने वाला व्यक्ति सफलता की ओर नहीं बढ़ता और न ही सफल हो पाता है, क्योंकि उसकी सारी ऊर्जा दूसरे के बारे में सोचने में समाप्त हो जाती है। वह आत्मचिंतन कब करेगा? यदि आत्मचिंतन करेगा तभी तो सफलता की ओर बढ़ेगा। यदि वह एक बार सफलता के मार्ग पर कदम रख ले, तो फिर आगे बढ़ता चला जाएगा। एक दिन वह इतना सफल हो जाएगा कि आत्मविभोर हो जाएगा और दूसरे उसकी पूजा शुरू कर देंगे। ■

तीर्थ का महत्व

● श्री किरीट भाईजी ●

यात्रा तो सफल होती है जब किसी संत की संगति हो। थोड़ा सत्संग हो, कीर्तन हो तब यह यात्रा सफल होती है। हम जाते हैं प्रसाद पा लेते हैं। जिस दिन किसी तीर्थ में पहुंचो तो उस दिन ब्रह्मचर्य का पालन, हो सके तो भूमिशयन और कर सको तो उपवास होना चाहिए दस दिन। हम लोग तो जाते हैं रबड़ी खाने के लिए। पूड़ी, कचौड़ी। जहां भी जाओ, थोड़ा संयम निभाना। आंतरिक शुद्धि करने के लिए जा रहे हैं न। घर में तीन बार स्नान किया तो तन की शुद्धि हो गई, लेकिन भीतर का क्या करोगे। भीतर को साफ करने के लिए ये तीर्थ यात्रा है।

किसी ने मुझसे पूछा था कि मंदिर में क्यों जाते हो? मंदिर तो आपके घर में भी है, मंदिर में जाने की जरूरत नहीं। मंदिर में इसलिए जाते हैं कि मंदिर की सीढ़ियों पर हजारों साधु-संतों, भक्तों की चरण रज होती है और वही चरण रज लगाने के लिए मंदिर जाते हैं। और ये संतों की चरण रज घर में कहां से आएगी, मंदिर में जाना पड़ेगा।

किसी और जगह पर तुमने पाप किया तो तीर्थ में आकर तुम इससे मुक्त हो सकते हो। लेकिन 'तीर्थ क्षेत्रे कृतं पापं वज्र लोको भविष्यति' तीर्थों में पाप न करें। हमारे यहां विदेश से आते हैं लोग। यात्रा करने के लिए और यात्रा करके जब वापिस लौटते हैं तो 'हाय-हाय-हाय' रहने की जगह ठीक नहीं, खाना-रहना ठीक नहीं, कुछ लोगों ने परेशान किया।

यह तो कलियुग का प्रभाव है। इनके सामने न देखो। तुम अपना काम करके निकल आए हो बस। दुनिया की जवाबदारी, दुनिया की जिम्मेदारी तो हमारे कंधे पर नहीं, वह तो प्रभु के कंधे पर है। उनको सुधारना है तो सुधारने दो। तुम तुम्हारी यात्रा कर लो। तुम तुम्हारा दर्शन कर लो, सत्संग कर लो और जो दान-दक्षिणा करनी है वह करके वापिस आ जाओ। मौन रहो।

टाई-सूट पहनकर, अच्छे कपड़े पहनकर तुम तीर्थों में जाओगे तो गड़बड़ हो जाएगी, टूटी-फूटी धोती पहनकर जाओगे तो कोई तकलीफ नहीं। तीर्थों में पाप न करें, तीर्थों में अपमान न करें। वैसे तो ब्राह्मण हर एक जगह पर कर्मकांड कर सकते हैं, सेवा-पूजा कर सकते हैं लेकिन यदि विप्र भी अपने शहर को छोड़कर तीर्थ में जाए, तो तीर्थ के ब्राह्मण की ही सेवा करनी चाहिए। तीर्थ के पंडित होते हैं। अधिकार होता है उनका। भले ही हम विद्वान क्यों न हो, पर जाते हैं तो पूजा उन्हीं से करवाते हैं। लड़ाई-झगड़ा न करें इनके साथ और यदि करना है कुछ तो केवल मौन।

तीर्थों को पवित्र करने के लिए ये ऋषि-मुनि जाते हैं। मंदिर में वैष्णवों की चरण रज लेने के लिए हम जाते हैं। वैसे तो मंदिर हमारे घर में भी है, ठाकुरजी यहां भी विराजमान हैं वहां जाने की क्या जरूरत है। तीर्थों में साधु-संतों की संगति, उनकी चरण धूलि मस्तक पर लगाने के लिए यात्रा करते हैं। तीर्थ धामों को साधु-संत पवित्र करते हैं। ■

धरोहर

डॉ. नरेन्द्र कुमार 'भैया'

जीवन में तिलक का लाभ

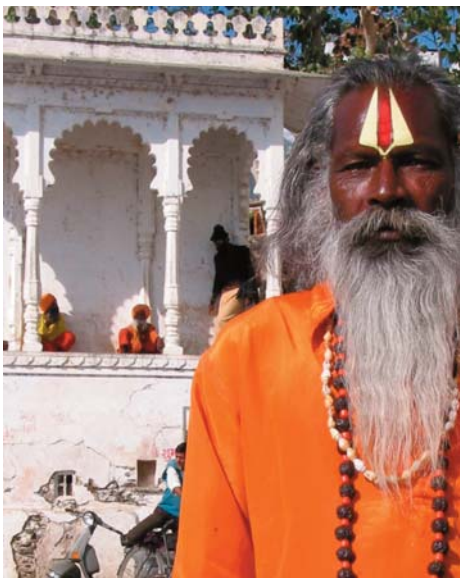

मानव जीवन में अद्वितीय महत्व है तिलक का। तिलक के लगाने से अथवा लगवाने से जीवन में यश वृद्धि, संतान लाभ, ज्ञान की वृद्धि, मनोबल का बराबर बरकरार रहना, मां सरस्वती और मां लक्ष्मी की कृपा दिनोंदिन बराबर बनी रहती है। मानव अन्य प्रकार से भी बराबर लाभान्वित होता रहता है। मानव का तिलक ना लगाने से किसी भी प्रकार से पूजा-पाठ व विभिन्न मान्यताओं के मुताबिक सूने मस्तिष्क को शुभ नहीं माना जाता है। माथे यानी कि मस्तक (भाल) पर रोली, कुमकुम, सिन्दूर, भस्म (भभूती) अथवा चंदन का तिलक विद्वान से लगवाया जाता है। चंदन दो प्रकार का होता है। प्रथम लाल चंदन व द्वितीय सफेद चंदन- ये दोनों प्रकार के चंदन खुशबुनुमा वृक्ष की लकड़ी के होते हैं। तंत्र शास्त्र के विशेष नियमानुसार बिना तिलक दैनिक संध्या पाठ-पूजन, गुरु दर्शन, देव पूजन व देव दर्शन, पूजन और अर्क व तर्पण इत्यादि को निषेध या अपमानित माना जाता है। यदि याचक के पास वर्तमान में ऊपर लिखित कोई भी सामग्री नहीं हो तो शुद्ध पवित्र जल या शुद्ध पवित्र मिट्टी से भी तिलक लगाकर कार्य का शुभारंभ किया जा सकता है।

इसी प्रकार तंत्र शास्त्र में मानव शरीर का तेरह भागों पर तिलक लगाने या लगवाने का नियमानुसार विधि-विधान है। समस्त तेरह भागों को संचालित करने का मुख्य कार्य मस्तक का होता है। इसलिए विशेषकर माथे (भाल) पर तिलक लगाने या लगवाने की अधिकांशतः परम्परा आदिकाल से बराबर चली आ रही है जो कि आज तक बराबर प्रचलित है।

तिलक लगाने या लगवाने में दाहिने हाथ की किस अंगुली का महत्व है एवं इसके साथ अन्य किन अंगुलियों का महत्व है जो अपने हाथ में अलग-अलग अस्तित्व प्रदान करती है। हाथ की कनिष्ठका अंगुली यानी कि सबसे छोटी अंगुली से तिलक नहीं लगाया जाता है। प्रथम अंगुली अनामिका जो कि सूर्य ग्रह की प्रदत्त अंगुली है। रमल (अरबी ज्योतिष) शास्त्र के अनुसार यह सुख-शांति प्रदान करने वाली साथ ही सूर्य देवता के समान तेजस्वी, ज्ञानार्थ, कांतिमय मानसिक शांति प्रदान करती है। द्वितीय अंगुली मध्यमा अंगुली है जो कि शनि ग्रह से संबंधित रहती है। इस अंगुली से मानव की आयु (वय) की वृद्धि प्रदान का कारक है। तृतीय अंगुली तर्जनी है जो कि गुरु ग्रह (बृहस्पति) की प्रदत्त अंगुली है। इस अंगुली से तिलक लगाने पर मोक्ष प्रदान देने वाली है यानी कि जीवनचक्र (आवागमन) से मुक्ति प्रदान करने वाली अंगुली है। इसी कारण से मृतक व्यक्ति को तिलक इसी अंगुली से किया जाता है। अंतिम तिलक का अंगूठा याचक को करने पर विजयश्री को दर्शाता है। जगत के पालनहार भगवान शंकर व युद्ध मैदान या किसी खास अवसर पर तिलक त्रिपुण्ड द्वारा किया जाता है। यानी कि तर्जनी अंगुली, मध्यमा अंगुली, अनामिका अंगुली से त्रिपुण्ड कर अंगूठे से तिलक विजयश्री होने की भावना से किया जाता है। अंगूठी शुक्र को दर्शित करता है। शुक्र मानव की सृष्टि व जीवनशक्ति का प्रतीक है। इससे याचक जीवन में शुक्र मन में उल्लास, उमंग, उत्साह, शुक्र के समान है। इससे नवजीवन का बराबर संचार होता है।

-रमल (अरबी ज्योतिष) शोध संस्थान (रजि.),
3, महल खास किला, भरतपुर (राजस्थान)

क्यों आते हैं खर्राटे ?

प्रेमा राव

विश्वभर में इकट्ठे किये गये आंकड़ों के अनुसार विश्व की 30 प्रतिशत से 40 प्रतिशत जनसंख्या सोते समय खर्राटे भरने की समस्या से पीड़ित है। भारत जैसे विकासशील देशों के परिवारों में भले ही इस समस्या को गंभीरता से न लिया जाता हो, मगर विकसित देशों में खर्राटे की समस्या के कारण पति-पत्नी द्वारा एक-दूसरे से तलाक लेना आम-बात हो गई है।

वैज्ञानिकों के अनुसार खर्राटे लेने वाले व्यक्तियों में दिनभर की थकान, नींद पूरी न होना, उच्च रक्तचाप, धमनी विकार आदि विभिन्न लक्षणों से हो सकते हैं। जब सोते समय व्यक्ति की श्वास-प्रक्रिया किसी न किसी कारण से अवरोधित होती है, तो एक अजीब-सी ध्वनि के साथ बाहर निकलती है। लेकिन कई बार ऐसा भी होता है, जब व्यक्ति सोते समय श्वास लेना बंद कर देता है, जो कि 10 सेकेण्ड से लेकर 2 मिनट तक भी हो सकता है। इस लक्षण को आब्स्ट्रक्टिव स्लीप एपीनिया सिंड्रोम (ओ.एस.ए.) कहते हैं तथा इससे जान का खतरा भी हो सकता है।

इस बीमारी के कई लक्षण हैं, जैसे- गर्दन छोटी, गाल लटकना, ऊपरी जबड़ा तंग होना, नीचे का जबड़ा लंबा और संकीर्ण, तालु भारी होना, जीभ भारी लगना इत्यादि।

सामान्य मामलों में चिकित्सक जीवनशैली में परिवर्तन लाने की ही सलाह देते हैं, जैसे मदिरा, धूम्रपान और नींद की गोलियों से परहेज करना, अधिक तले हुए या वसायुक्त भोजन से बचना, नियमित व्यायाम करना और अपनी नींद पूरी करना। इसके अलावा कुछ पद्धतियां ऐसी और भी हैं, जो ओ.एस.ए. के लिए कोई विशेष प्रभावशाली सिद्ध नहीं होती, मगर खर्राटे बंद करने में काफी कारगर रहती है, जैसे कि लेजर की सहायता से की गई सर्जरी, डेंटल उपकरण मसलन मेंडीबुलर एडवांसमेंट डिवाइस (एम.ए.डी.) और रेडियो-फ्रीक्वेंसी एब्लैशन। रेडियो फ्रीक्वेंसी नरम जीभ के आधार और नरम तालु के आकार में अनुपातिक कटौती करती है जिससे कि जीभ और तालु के बीच की जगह बढ़ती है और ध्वनि बंद हो जाती है, यह प्रक्रिया ओ.पी.डी. में भी की जा सकती है और इसके लिए रोगी को अपना अधिक समय नहीं देना पड़ता।

-बी-170, सरस्वती विहार, दिल्ली-34

विवेचन

प्रेम रावत महाराज

मन से नहीं, हृदय से मांगो

अक्सर लोग कहते हैं कि हमें तो धन की जरूरत है। अगर मैं तुमसे कहूं कि ठीक है तुम को एक संदूक सोना भरकर दे देंगे परन्तु उसके बाद तुमको तुरंत फांसी पर चढ़ा देंगे, तो क्या कहोगे? तुम कहोगे कि माफ करना, ऐसा धन हमें नहीं चाहिए। तुम समझते हो कि तुम्हें धन की जरूरत है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि तुम्हें धन की जरूरत नहीं है। खाने-पीने के लिए, कपड़े के लिए, मकान के लिए, संसार की जो परम्पराएं हैं, उन्हें निभाने के लिए मनुष्य को धन की जरूरत होती है। परन्तु तुम्हारी एक और जरूरत है और उस जरूरत को पूरा किए बिना तुम्हारे पास कितना भी धन हो, तुम को ठीक नहीं लगेगा।

तुम्हारी असली जरूरत क्या है? तुम्हारी असली जरूरत है शांति। चाहे तुम्हारे पास कुछ भी न हो, पर शांति हो तो सब ठीक है। और सब कुछ हो, परन्तु शांति न हो तो कुछ भी ठीक नहीं लगता है। क्यों? तुम्हारा एक मकान है या घर है या जहां रहते हो वह है, खेत है, तुम्हारे बच्चे हैं, पत्नी है, सब कुछ है। एक दिन सब कुछ ठीक है और एक दिन कुछ भी ठीक नहीं है। क्यों? अगर बात घर की है, तो घर तो तब भी है। उस घर में एक दिन तुम बड़े आनंद से रह रहे हो, खूब मजा आ रहा है, गाना सुन रहे हो, नाच रहे हो और एक दिन वही मकान है, वही पत्नी है, वही खेत, वही भैंस है, वही गऊ है, परन्तु अपना चेहरा लटकाए हुए बैठे हो। क्यों? अगर तुम्हारी खुशी उन्हीं चीजों पर निर्भर है, तो वे तो हैं, फिर चेहरा क्यों लटकाए हुए हो? क्योंकि तुम्हारी खुशी उन चीजों पर निर्भर नहीं है।

हमारा हृदय एक ऐसी शांति का अनुभव करना चाहता है, एक ऐसी खुशी का अनुभव करना चाहता है जो सदा बनी रहे। चाहे संसार में कुछ भी हो जाए, वह सदा बनी रहे। यह हमारे हृदय की ख्वाहिश है, हमारे दिमाग की नहीं। हमारे मन की नहीं, हमारे हृदय की ख्वाहिश है कि मैं अपने जीवन में हर दिन निरंतर उस आनंद का अनुभव कर सकूं। अगर यह बात तुम को समझ में आ गई, तो जो मैं समझाना चाहता हूं, वह बात भी तुम को समझ में आ जाएगी। क्योंकि उस आनंद के लिए ही लोग सब कुछ करते हैं। लोग तो आनंद के लिए अनेक कार्य करते हैं। कोई मंत्र जाप करता है, कोई माला फेरता है, परन्तु उसके बारे में कहा है: माला जपूं न कर जपूं, जिह्वा कहे न राम, सुमिरण मेरा हरि करे, मैं पाऊं विश्राम। क्या है यह? पूछो दुनिया के लोगों से कि क्या है यह? किसी को नहीं मालूम। इसी चीज को हम कहते हैं- ज्ञान। यही चीज हम लोगों को देते हैं। हम सिर्फ ज्ञान ही देते हैं, हमारे हर एक शब्द के पीछे हम हैं। लोगों से हम कहते हैं कि अगर तुम जानना चाहते हो, अगर तुम अपने जीवन के अंदर उस श्वास के मूल्य को पहचानना चाहते हो, अगर अपने

हमारा हृदय एक ऐसी शांति का अनुभव करना चाहता है, एक ऐसी खुशी का अनुभव करना चाहता है जो सदा बनी रहे। चाहे संसार में कुछ भी हो जाए, वह सदा बनी रहे। यह हमारे हृदय की ख्वाहिश है, हमारे दिमाग की नहीं।

जीवन के अंदर समाए उस परमानंद का अनुभव करना चाहते हो, तो हम तुम्हारी मदद कर सकते हैं।

यह मैं किसी से नहीं कह सकता कि अपने बाल-बच्चों को छोड़ दो, तुम अपनी जिम्मेदारियों को छोड़ दो। जिम्मेदारियों के पीछे तो लगना ही है, परन्तु इसके बावजूद अगर इस जीवन के अंदर शांति संभव है तो बढ़िया बात है, वरना खाली हाथ आए थे और खाली हाथ ही जाना है। इसीलिए मैं सब लोगों से कहता हूं कि जिंदगी के अंदर शांति होनी चाहिए। पर देखिए, यह मांग तुमने अभी तक भगवान से कही ही नहीं है। कोई भगवान से घर मांगता है, कोई बच्चा मांगता है, कोई दौलत मांगता है, कोई नौकरी, तो कोई प्रमोशन मांगता है। शांति मांगने वाले बहुत कम हैं। क्योंकि लोग यही सोचते हैं कि अगर वे भगवान के मंदिर में गए, तो उससे वह मांगेगे, जो मन चाहता है। हृदय जो चाहता है, वह मांगने कोई नहीं जाता मंदिर में। परन्तु तुम अपने हृदय के मंदिर में जाओ और क्या मांगो? अगर तुम शांति मांगोगे, तो तुम को शांति जरूर मिलेगी। ■

राम नाम में छिपी दिव्यता

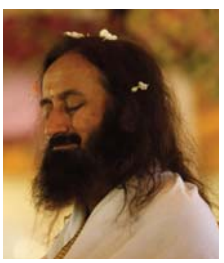

श्री श्री रविशंकर

राम 'रा' माने रमता हुआ, 'म' माने मुझमें रमता हुआ। जो भी शक्ति है, उसी को राम कहते हैं। राम माने जो चमकता है। चांदी को रजत कहा, सूर्य को रवि।

'र' माने जो प्रकाशमान है, चमकता है। और कहां चमकता है? 'म' - मुझमें। हमारे दिल में जो प्रकाशमान है, उस चेतना को कहा राम। हरेक के दिल में जो प्रकाश है, जो सदा चमकता है, उस चेतन शक्ति को कहा राम। 'श्री' माने संपत्ति के साथ, वैभव के साथ, राजा राम (राजा में भी 'र')

अयोध्या- जो युद्ध के लिए योग्य नहीं। अयोध्या में राम का जन्म हुआ।

दशरथ- रथ माने जो चलता है। हमारे 5 ज्ञानेन्द्रिय और 5 कर्मेंद्रिय-तो ये हैं दस रथ। और कौशल्या माने कुशलता, कैकई कर्मण्यता, कर्म में निपुणता, श्रद्धा, सुमित्रा है मित्रता, जिस शरीर में पांच ज्ञानेन्द्रिय और पांच कर्मेन्द्रिय ठीक हों, ये दस इन्द्रिय कुशलता से काम करें...।

और उनके साथ मित्रता, कुशलता और कर्मण्यता हो, तो उसमें राम, भरत, लक्ष्मण का जन्म हुआ।

और उसमें सांस जो चल रही है वह है पवन पुत्र हनुमान...।

आत्मा-रूपी राम मन-रूपी सीता को जब खो देता है, रावण-रूपी अहंकार के लिए, फिर राम और लक्ष्मण-आत्मा और होश को, हनुमानजी की सहायता लेनी पड़ती है- सांस के जरिए हम मन को शांत कर सकते हैं...।

संस्कार के प्रणेता नारद

पी. डी. सिंह

नारद ब्रह्मा के मानस पुत्र थे। वे महान तत्वज्ञ एवं ईश्वर के महान भक्त थे और अपने प्रभु नारायण को आठों प्रहर स्मरण करते रहते थे, कीर्तन में संलग्न रहते थे। नारायण का जप-कीर्तन और लोगों को शिक्षा देना यही दो प्रधान कार्य थे। उनके प्रशिक्षण का क्षेत्र व्यापक था। तीनों लोकों में उनकी निर्बाध गति थी। उन्होंने व्यासजी द्वारा रचित तीन लाख श्लोकों वाला महाभारत देवताओं को सुनाया था। उन्होंने ही मार्कण्डेय मुनि को धर्मशास्त्र एवं आत्मज्ञान सिखाया था, श्री वाल्मीकि रामायण का ज्ञान कराया और व्यासजी को भागवत लिखने की प्रेरणा दी। जब पाण्डवों को वन में ब्राह्मणों को भोजन कराने में कठिनाई हुई तो उनके पुरोहित धौम्य मुनि को सूर्य की उपासना करके अक्षयपात्र प्राप्त करने की आराधना बताई।

प्राय: लोग नारद को झगड़ा कराने वाला बताते हैं और आज भी परस्पर झगड़ा कराने वाले व्यक्ति को नारद बताते हैं। श्रीकृष्ण ने कह रखा था कि यह तो विश्वहित में नारद की निर्दोष लीला है। वे कहते थे कि जब किसी दैत्य व दानव का विनाशकाल आ जाता था तो वे उसके कलह भाव को उभारते थे किन्तु असत्य का सहारा कभी नहीं लेते थे। वे दुष्ट का हित (नाश) और विश्व का कल्याण करते थे।

नारद नैतिकता को जीवन में उतारने की शिक्षा देते थे। जब हिरण्य कश्यप का बोलबाला था और सब उससे भयभीत थे और जब वह अहिंसा की बजाय हिंसा, प्रेम के स्थान पर विद्वेष का और ईश्वर के स्थान पर वह स्वयं अपने को प्रतिष्ठित करना चाहता था और जब हिरण्यकश्यप का अत्याचार और अन्याय बढ़ता चला गया और भूमंडल को वह वीरान करता चला गया तो यह देखकर नारद को चिन्ता हुई।

वरदान के प्रभाव से हिरण्यकश्यप का कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता था। देवर्षि नारद सत्य एवं धर्म के नाश से चिंतित थे। वे जानते थे कि इस मूढ़ पर तो शिक्षा का प्रभाव पड़ेगा नहीं और नई पीढ़ी को ही शिक्षित करना होगा। पर किसी को सिखाना मुश्किल था क्योंकि सब ओर हिरण्यकश्यप का ही आतंक था। नारदजी को कुछ प्रतीक्षा करनी पड़ी।

जब हिरण्यकश्प तप करने चला गया तो इन्द्र ने अपनी छीनी हुई धन-दौलत को पुन: प्राप्त करने हेतु नगर पर चढ़ाई कर दी। इन्द्र का सामना कौन कर सकता था और वह अपनी वस्तुएं वापस ले गया साथ ही रानी कयाधू को भी बन्दी कर लिया। कयाधू गर्भवती थी। उसे अपने से ज्यादा गर्भस्थ शिशु की अधिक चिन्ता थी इसलिए जोर-जोर से विलाप करती जा रही थी। नारद तो अवसर की प्रतीक्षा में थे सो तुरंत आ पहुंचे। उन्होंने इन्द्र को भला बुरा कहा और उसे समझाया कि महिलाएं अवध्य होती है अत: कयाधू को छोड़ दो। इन्द्र बोला, 'मैं इसे नहीं इसके गर्भस्थ शिशु को मारूंगा क्योंकि सांप का बच्चा सांप ही होता है। बड़ा होकर यह भी निरीह प्राणियों की हत्या करेगा अत: करोड़ों की हत्या बचाने हेतु एक की हत्या ही ठीक है।''

नारदजी ने कहा, ''देवराज, रहस्य की बात यह है कि यह बालक तो भगवान का भक्त बनेगा।'' इन्द्र ने कयाधू को मुक्त कर दिया। कयाधू ने अब नारद मुनि के पास रहने में ही अपने को सुरक्षित समझा और उनके आश्रम में ही रहने लगी। नारदजी यही तो चाहते थे ताकि वे गर्भस्थ शिशु को गर्भकाल से ही ईश्वर भक्त और धर्मरक्षक बना दें और यह योजना सुनकर कयाधू प्रसन्न हुई पर दानव के बालक को ईश्वर भक्त बनाने की शिक्षा कैसे संभव होगी, यह संशय था।

उन्होंने दो बच्चों की घटना से समझाया। एक बालक हाथ में मेहंदी लगाकर आया और दूसरे से कहा ''तू भी मेहंदी लगाकर हाथ लाल कर ले।'' बालक बोला अरे मेहंदी के हरे पत्तों से ललाई कैसे आयेगी, पहले ने कहा, ''अपनी मां से कहो मेहंदी के पत्तों को पीसकर तुम्हारी हथेली में लगाये, थोड़ा सुखाओ फिर हाथ धो लो। उसने ऐसा ही किया और हाथों में लाली आ गई।''

नारदजी ने कयाधू से कहा ''बेटी, मेहंदी की लाली दिखती नहीं पर उसमें व्याप्त है। उसे विशेष प्रक्रिया से देखा जा सकता है। इसी प्रकार कण-कण में ईश्वर व्याप्त है, उसे भी विशेष पद्धति से देखा जा सकता है।'' नारद प्रतिदिन एक सत्य घटना सुनाते गये। उन्होंने यह भी बताया कि किस प्रकार ब्रह्मा के वरदान से हिरण्यकश्यप शक्तिशाली हो गया है। वे धर्म कथाएं सुनाते रहे। कयाधू तो पति प्रभाव से, दबाव से व भय से पत्थर बन गई थी पर गर्भस्थ शिशु अभी कच्ची मिट्टी का लौंदा मात्र था। इस पर संस्कार डालना सरल होता है और संस्कारित हो जाने पर उसे कोई भी नहीं डिगा सकता। मैं इस गर्भस्थ शिशु को गर्भ से ही ईश्वर का अनन्य भक्त बनाने का प्रयास कर रहा हूं।

बालक तो संस्कारित हो ही गया लेकिन गुरु के आश्रम में जाकर उसने अन्य बालकों को भी ईश्वर का भक्त बना दिया। इस प्रकार उसने गुरु नारद की ''नयी पीढ़ी का निर्माण पद्धति'' को चालू रखा।

हिरण्यकश्यप को प्रह्लाद की ईश्वर भक्ति से घोर अप्रसन्नता हुई और नन्हें बालक को आग में जलाने का प्रयत्न किया पर वह जला नहीं तो भक्ति व विश्वास और भी दृढ़ हो गया और नदी में डुबोया तथा पहाड़ से गिराने पर भी बच गया। यह देखकर उसे अपने पर अविश्वास हो उठा कि मैं तो ईश्वर नहीं हूं, ईश्वर तो कोई और ही शक्ति है फिर भी उसने अंतिम प्रयास किया स्वयं प्रह्लाद की हत्या करने का और हत्या करने से पहले पूछा, ''अब कहां है तेरा भगवान, देखता हूं कैसे बचायेगा?'' प्रहलाद ने कहा ''भगवान सब जगह है, इस खंभे तक में भी मौजूद है।'' यह सुनकर कुपित हिरण्यकश्यप ने जब तलवार का वार करना चाहता तो खंभ फाड़कर नृसिंह रूप में भगवान ने उस वरदान प्राप्त शक्तिशाली हिरण्यकश्यप का अपने हाथों के नाखूनों से वध कर दिया। इस प्रकार नई पीढ़ी में हिरण्यकश्यपवाद समाप्त हो गया और आस्तिकवाद की स्थापना हो गई।

यह सत्य है कि प्रभावी शिक्षा का एवं संस्कारित करने की शिक्षा को गर्भकाल से बालक के 7 वर्ष की आयु तक तो सघन रूप से दी जानी चाहिए तभी वह दृढ़ संस्कारित होकर आसुरी प्रवृत्तियों का मुकाबला कर सकेगा। आस्तिकता के समक्ष नास्तिकता टिक नहीं सकती।

'नासते विद्यते भावो, नाभावो विद्यते सत:।'

–निदेशक, टैगोर शिक्षण संस्थान
शास्त्रीनगर, जयपुर-302016 (राज.)

प्राय: लोग नारद को झगड़ा कराने वाला बताते हैं और आज भी परस्पर झगड़ा कराने वाले व्यक्ति को नारद बताते हैं। श्रीकृष्ण ने कह रखा था कि यह तो विश्वहित में नारद की निर्दोष लीला है।

गोवंश की रक्षा के लिए आये थे श्रीकृष्ण

स्वामी करपात्री

गाय का दुग्ध, दही, घृत, गोमूत्र स्वास्थ्यकारक एवं सर्वरोग निवारक है। गोमूत्र में गंगा तथा गोबर में लक्ष्मी का निवास है। गोमूत्र गोबर से अनेक उदर, चर्म, रक्तादि के रोगों का निवारण होता है। अनुपम खाद निर्माण का भी गोमूत्रादि दिव्य साधन है। पंचगव्यपान देह के त्वक् अस्थिगत दोषों के निवारण एवं आत्मशुद्धि का परम साधन है। प्रत्येक तपोव्रत योगादि के पूर्व यह अत्यावश्यक है। किसी भी देवपूजा प्रतिष्ठा में गो दुग्धादि पंचामृत अनिवार्य है। हिन्दू संस्कृति के मूल प्रत्येक संस्कार में गोदान होना चाहिए।

गाय के खुर, सींग तथा रोम-रोम में देवता, कुलपर्वत, तीर्थ विद्यमान होते हैं। अन्य मंदिरों की परिक्रमा में सीमित देवताओं की परिक्रमा होती है, किन्तु गाय की परिक्रमा में सभी देवताओं, तीर्थों, कुलपर्वतों की परिक्रमा हो जाती है। वेद, रामायण, मनु आदि, धर्मशास्त्र के अनुसार भारतीय संस्कृति यज्ञ भावना से ओतप्रोत है। यज्ञ में हवि और मंत्र का ही प्राधान्य होता है। दूध, दधि, घृतादि हवि गौ में और मंत्र ब्राह्मणों में निहित होते हैं।

गाय के खुर, सींग तथा रोम-रोम में देवता, कुलपर्वत, तीर्थ विद्यमान होते हैं। अन्य मंदिरों की परिक्रमा में सीमित देवताओं की परिक्रमा होती है, किन्तु गाय की परिक्रमा में सभी देवताओं, तीर्थों, कुलपर्वतों की परिक्रमा हो जाती है।

अनंत कोटि ब्रह्मांड नायक सर्वेश्वर शक्तिमान भगवान राम गो ब्राह्मण के रक्षणार्थ ही नंगे पांव वन-वन में भटके और उनके चरणबिंदु दंडक-कंटक विद्ध हुए। भगवान श्रीकृष्ण चंद्र परमानंद कंद ने भी श्रीमद् वृंदावनधाम में नंगे पांव गोचारण का व्रत लेकर गोवंश का सर्वोत्कृष्ट माहात्म्य प्रख्यात किया। गोवंश के नाश से सबका नाश निश्चित है। इसी दृष्टि से दिलीप, मान्धाता, नहुष आदि नरेश उसकी रक्षा के लिए बद्धपरिकर और प्राणाहुति तर्पण के लिए सदा प्रस्तुत रहते थे।

दुर्भाग्य से इस देश में शताब्दियों से गोहत्या का कलंक चल रहा है। इसको रोकने के लिए अनेक सत्पुरुषों ने प्रयास किया। फलस्वरूप कई बार मुगल बादशाहों ने भी शाही फरमानों द्वारा गोहत्या पर पूर्ण प्रतिबंध

लगा दिया था परन्तु काल क्रम से अंग्रेजों की कुटिलता के कारण यह फिर भी चलता रहा। गोवंश का रक्षण एवं पालन सभी के लिए लाभदायक है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सभी के लिए दूध, दही, मक्खन, मट्ठा सुलभ होगा। इससे सभी का स्वास्थ्य समुन्नत होगा।

गाय के जीवित रहने पर उससे कई गाय एवं कई बैल प्राप्त होते रहते हैं। कीमती खाद तथा बैलों द्वारा उत्तम अन्न की भी प्राप्ति होती है जिसके बिना केवल मांस से प्राणी का जीवन ही नहीं चल सकता। अतः सर्वजनहिताय, अधिक स्वात्महिताय भी मांस खाने का प्रलोभन छोड़कर गोपालन ही श्रेष्ठ है, इसके अतिरिक्त जब गोवंश सर्वजनहितकारी होने के साथ-साथ भारतीय राष्ट्र की संस्कृति, धर्म सभ्यता तथा ऐसे गोविंद का चिंतन मनन कल्याणकारी है। हर जीवन के आचरण में कर्म दिखाई देना चाहिए। गोविंद का नाम ही जीवन का परमोद्धारक है जो मनुष्य के सारे पापों को नष्ट कर देता है। श्रीकृष्ण लीलाओं और गौमाता का सुंदर अनुगायन श्रीमद् भागवत में वर्णित है।

वहां कहा गया है कि श्रीकृष्ण ही परम सत्ता है, परमब्रह्म है, वही आदि, मध्य व अंत है। उन्हीं की वाणी का अनुसरण करना उचित होगा। श्रीकृष्ण ऐसे ही मार्गदर्शक हैं जिनका अनुसरण करके हमें गौमाता की रक्षा करना चाहिए एवं मांस का त्याग करना चाहिए। यही प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य भी होना चाहिए। ■

सत्कर्म का परिणाम

श्री आनन्दमूर्ति

मनुष्य को जो नहीं करना चाहिए, वह करना ही पाप है और जो करना चाहिए, वह नहीं करना ही प्रत्यवाय है। चोरी करना अनुचित है, यह जानकर भी कोई अगर चोरी करता है, वह होगा प्रत्यवाय।

जितने दिनों तक पाप का प्रतिफल नहीं पाते हैं, उतने दिनों तक पाप को अच्छा कहकर ही मानते हैं। भारत के किसी शहर में धोबी को कपड़ा धोते देखो, वह जिन कपड़ों को धोता है, उसे माथे के ऊपर अधिक ऊंचा उठाता है। कपड़ा समझता है, वह मिट्टी से कितना ऊपर उठ गया है और हवा में उड़ रहा है और थोड़ी दूर आनंद भी पाता है, किन्तु वह यह नहीं समझता है कि उसे जितना ही ऊपर उठाया गया है, उतने ही जोर से कपड़ा धोने के पत्थर पर धोबी उसे पटकेगा। जो पाप करते हैं वे सर के ऊपर उठे हुए कपड़े की तरह हैं। वे सोचते हैं- अरे! मिट्टी से ऊपर उठने से कितना आराम है! पाप में डूबकर मजा लूट रहा है। जब पाप का प्रतिफल भोगता है तब दुख-सागर में डूब मरता है, धोबी के कपड़े की तरह।

'स्वच्छ' और 'भद्र' दोनों शब्दों में अर्थगत पार्थक्य है। 'स्वच्छ' माने अच्छा या परिष्कार साफ जैसा स्वच्छ जल। 'भद्र' माने जो भीतर-बाहर दोनों ही ओर से अच्छा हो। जो भद्र है वे कुछ भी करने के पहले बहुत सतर्क रहते हैं। वे ठण्डे मस्तिष्क से विचार लेते हैं- उनकी क्रिया की प्रतिक्रिया क्या होगी? वे अच्छे कार्य करते हैं यद्यपि वे अपने सत्कर्म का सत्फल नहीं पाते, उतने दिन वे कर्मभोग करने में भी द्विधा-बोध नहीं करते हैं और जिस मुहूर्त में भले कार्य के सुप्रतिफल की प्राप्ति का आरंभ हो जाता है, तब सिर्फ आनन्द और आनन्द ही प्राप्त करते हैं।

असत्कर्म करने में मनुष्य को अच्छा लगता है, किन्तु असत्कर्म का एक बार भोग शुरू हो जाने पर सिर्फ दुःख ही दुःख भोगना पड़ता है। ■

महिमा

हिमांशु शेखर

प्रकांड विद्वान थे हनुमान

उत्कृष्ट प्रत्यभिज्ञा के प्रतीक हनुमान पूर्ण मानव थे। कहते हैं कि ब्रह्मा ने जब मनुष्य का निर्माण किया तो उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई, क्योंकि उन्हें यह अनुभूत हुआ कि उनके द्वारा सृष्ट मानव ईश्वर का साक्षात्कार करने में समर्थ है। मानव न केवल संपूर्ण प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है, प्रत्युत वह अपनी साधना के द्वारा ब्रह्मपद को भी प्राप्त कर सकता है। त्रेतायुग के सर्वाधिक शक्तिशाली मानव हनुमान जिन्हें भ्रमवश अनेक देशी-विदेशी विद्वान पेड़ों पर उछल-कूद करनेवाला साधारण वानर मानते रहे हैं, अपने अलौकिक गुणों और आश्चर्यजनक कार्यों के बल पर कोटि-कोटि लोगों के आराध्य बन गये। तभी तो रावण को कहना पड़ा था- ''न ह्यहं तं कपिं मन्ये कर्मणा प्रतिकर्यन'' (वा.रा. 5.46.6) अर्थात उसके आश्चर्यजनक कर्मों को देखते हुए और तर्कपूर्वक विचार करने पर मैं उसे वानर नहीं मान सकता।

भारत ही नहीं, विश्व के इतिहास में किसी ऐसे मानव का उल्लेख नहीं मिलता, जिसमें शारीरिक बल और मानसिक शक्ति का एक साथ इतना अधिक विकास हुआ हो जितना हनुमान में हुआ था। प्राचीन भारत में ब्रह्मतेज से युक्त अनेक महामानव हुए। इसी प्रकार इस पावनभूमि में ऐसे विशिष्ट व्यक्ति भी हुए जो शारीरिक बल में बहुत बढ़े-चढ़े थे, परन्तु ब्रह्मतेज के साथ-साथ शास्त्र-बल का जो आश्चर्यजनक योग हनुमान में प्रकट हुआ, वह अन्यत्र दिखाई नहीं पड़ता।

हनुमान को बुद्धिमानों में अग्रगण्य माना जाता है। ऋग्वेद में उनके लिए 'विश्ववेदसम्' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अभिप्रेत अर्थ है- विद्वानों में सर्वश्रेष्ठ। हनुमान अपने युग के विद्वानों में अग्रण्य थे। उनकी गणना सामान्य विद्वानों में नहीं, बल्कि विशिष्ट विद्वानों में की जाती थी। वाल्मीकि रामायण में हनुमान को महाबलशाली घोषित करते हुए 'बुद्धिमतां वरिष्ठं' कहना पूर्ण युक्ति संगत है। 'रामचरितमानस' में भी उनके लिए 'अतुलित बलधामं' तथा 'ज्ञानिनामग्रगण्यम' इन दोनों विशेषणों का प्रयोग द्रष्टव्य है।

हनुमान की तर्क-शक्ति अत्यंत उच्च कोटि की थी। वैसे तो इसके अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं, परन्तु महर्षि वाल्मीकि ने ऐसे दो प्रसंगों का उल्लेख किया है, जिनसे उनकी मनुष्य को पहचानने की असामान्य क्षमता का पता चलता है। पहला प्रसंग पम्पा सरोवर का है। सीता-हरण के बाद श्रीराम लक्ष्मण के साथ वन-वन भटकते हुए पम्पा सरोवर के निकट पहुंचे और पुनः वहां से ऋष्यमूक पर्वत की ओर प्रस्थित हुए। जब बाली से प्रताड़ित सुग्रीव ने उन महावीरों को ऋष्यमूक पर्वत की ओर आते देखा तो भय से प्रकम्पित हो गया। उसे यह शंका हुई कि ये दोनों युवक बाली के द्वारा भेजे गये हैं और उन्होंने जान-बूझकर चीरवस्त्र धारण कर रखा है ताकि उन्हें पहचाना नहीं जा सके।

भय और आशंका से भरे हुए उस वातावरण में भी हनुमान निःशंक और निर्भीक थे। उन्होंने वनराज सुग्रीव को समझाया कि डरने का कोई कारण नहीं है क्योंकि दुष्टात्मा बाली किसी भी तरह वहां नहीं पहुंच सकता। साथ ही उन्होंने उत्तम नीति से युक्त यह वचन भी कहा- ''वानरप्रवर! आपका मन चंचल है। इसीलिए आप अपने चित्त को लक्ष्य में स्थिर नहीं पा रहे हैं। आपको बुद्धि और विज्ञान का आश्रय लेकर दूसरों की विभिन्न चेष्टाओं को देखकर उनके मनोभावों को जान लेना चाहिए क्योंकि जो राजा अपनी तर्क-शक्ति का उपयोग करते हुए कार्य नहीं करता, वह संपूर्ण प्रजा पर शासन नहीं कर सकता।'' संकट की घड़ी में भी शांतचित्त होकर अपने आसन्न कर्तव्य का निश्चय करना उत्तम प्रज्ञा का प्रमाण है। हनुमान इस सर्वोत्कृष्ट प्रज्ञा से युक्त थे।

दूसरा प्रसंग है विभीषण का लंका से तिरस्कृत होकर श्रीराम की शरण में आगमन का। जब लंकापति रावण ने अपने छोटे भाई विभीषण की सलाह को ठुकराकर उसका घोर अपमान किया तो वह अपने चार सहायकों के साथ वहां से निकलकर श्रीराम के निकट आया। उसे हथियारबंद सेनानियों के साथ आते देखकर सुग्रीव सहित समस्त वानर सशंकित हो उठे। सुग्रीव ने श्रीराम से बार-बार यह निवेदन किया कि विभीषण को उसके अनुचरों सहित बंदी बनाकर कठोरतम दंड दिया जाए, क्योंकि वह शत्रुपक्ष की ओर से उन लोगों का भेद लेने के लिए आया है। श्रीराम ने सुग्रीव के ऐसा कहने पर अपने मंत्रियों से सलाह मांगी।

हनुमान एक कोने में बैठकर प्रसन्नचित्त से सब कुछ सुन रहे थे। उन्होंने श्रीराम को समझाया कि विभीषण की मुखाकृति तथा चेष्टाओं से स्पष्ट हो जाता है कि वह निर्दोष हैं और मित्रभाव से वहां आया है ऐसे शरणागत का त्याग नहीं करना चाहिए बल्कि उसे अपनाना चाहिए। इतिहास साक्षी है कि हनुमान की मंत्रणा सही थी क्योंकि श्रीराम ने विभीषण की मदद से रावण का वध किया और सीता को वापस लाने तथा लंका पर विजय प्राप्त करने में सफल हुए।

प्राचीन भारत की सर्वश्रेष्ठ भाषा संस्कृत और व्याकरण पर हनुमान का असाधारण अधिकार था। जब वानरराज सुग्रीव का प्रिय करने के लिए हनुमान ऋष्यमूक पर्वत से उतरकर श्रीराम तथा उनके अनुज लक्ष्मण का परिचय प्राप्त करने हेतु उनके पास आये तो उन्होंने उनसे संस्कृत भाषा में अनेक प्रश्न किये। हनुमान की बातों को सुनकर श्रीराम को बहुत प्रसन्नता हुई और उन्होंने लक्ष्मण से कहा-

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं विभाषितुम्।। (वा.रा. 4/3/28)

अर्थात् जिसे ऋग्वेद का ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ हो, जिसने यजुर्वेद का अभ्यास नहीं किया हो तथा जो सामवेद का निष्णात विद्वान नहीं हो, वह इस प्रकार की उत्कृष्ट भाषा में संभाषण नहीं कर सकता।

श्रीराम ने पुनः कहा-

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।
बहु व्याहरतानेन न किंचिदपशब्दितम्।। (वा.रा. 4/3/29)

अर्थात् ''निसंदेह इन्होंने संपूर्ण व्याकरण का एक बार नहीं, अनेक बार अध्ययन किया है क्योंकि बहुत-सी बातों के बोलने पर भी इनके मुख से एक भी अशुद्ध शब्द नहीं निकला।''

हनुमान ने ब्राह्मण भिक्षु का रूप धारण कर श्रीराम से वार्तालाप किया था। उनकी वाणी संस्कार और क्रम से संपन्न थी। यही कारण है कि श्रीराम ने उनके द्वारा व्यवहृत भाषा के लिए ''संस्कारक्रम संपन्ना'' तथा ''अविलंबित'' विशेषणों का प्रयोग किया है। ध्यातव्य है कि जो वाणी व्याकरण के नियमानुकूल हो, उसे संस्कृत या ''संस्कारसंपन्ना'' तथा जिसका उच्चारण बिना हिचकिचाहट के धारा प्रवाह किया जा सके उसे ''अविलंबित'' कहते हैं। श्री हनुमान की वाणी ऐसी ही थी।

हनुमान ने सूत्र, वृत्ति, वार्तिक, महाभाष्य तथा संग्रह का भली-भांति अध्ययन किया था। अन्यान्य ग्रंथों तथा छंद-शास्त्र के ज्ञान में भी उनकी समानता करनेवाला कोई नहीं था। संपूर्ण विद्याओं के ज्ञान में उनकी तुलना देवताओं के गुरु बृहस्पति से की गयी है। महर्षि अगस्त्य के अनुसार हनुमान नवों व्याकरणों के अधिकारी विद्वान थे। नोबेल पुरस्कार विजेता आक्टाभियो पाज का भी यह मत है कि हनुमान ने व्याकरण शास्त्र की रचना की थी।

-204, होम अपार्टमेंट, पूर्वी आनंदपुरी
बोरिंग कैनाल रोड, पटना-800001

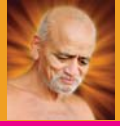

मीमांसा

आचार्य श्री विद्यासागर

स्पष्ट है महावीर का दर्शन

भगवान महावीर के दर्शन में प्रदर्शन के लिए कोई स्थान नहीं है। कारण यही है कि दर्शन अपने लिए है, अपनी आत्मा की उन्नति के लिए है, आत्मा की अनुभूति के लिए है। दर्शन का अर्थ है देखना लेकिन प्रदर्शन में तो मात्रा दिखाना ही है। देखना 'स्व' का होता है और दिखाने में कोई दूसरा होता है।

यदि हमें महावीर भगवान बनना है तो पल-पल उनका चिंतन करना अपेक्षित है। यह महावीर जयंती की सार्थकता है और इसी से हम महावीर बनने की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

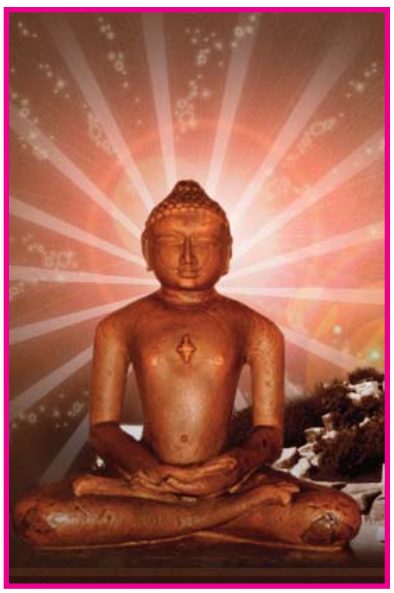

भगवान महावीर के दर्शन में प्रदर्शन के लिए कोई स्थान नहीं है। कारण यही है कि दर्शन अपने लिए है, अपनी आत्मा की उन्नति के लिए है, आत्मा की अनुभूति के लिए है। दर्शन का अर्थ है देखना लेकिन प्रदर्शन में तो मात्र दिखाना ही है। देखना 'स्व' का होता है और दिखाने में कोई दूसरा होता है। आज तक संसारी प्राणी की सभी क्रियाएं देखने के लिए न होकर दिखाने के लिए होती आयी हैं। प्रत्येक व्यक्ति इसी में धर्म मान रहा है। वह सोचता है कि मैं दूसरे को समझा दूं। यह प्रक्रिया अनादिकाल से क्रमबद्ध तरीके से चली आ रही है। यदि ऐसी क्रमबद्धता दर्शन के विषय में होती तो उद्धार हो जाता।

व्यक्ति जब दार्शनिक बन जाता है तो हजारों दार्शनिकों की उत्पत्ति में निमित्त कारण बन जाता है और जब एक व्यक्ति प्रदर्शक बन जाता है तो सब ओर प्रदर्शन प्रारंभ हो जाता है। प्रदर्शन की प्रक्रिया बहुत आसान है, देखा-देखी जल्दी होने लगती है। उसमें कोई विशेष आयाम की आवश्यकता नहीं है। प्रदर्शन के लिए शारीरिक, शाब्दिक या बौद्धिक प्रयास पर्याप्त है लेकिन दर्शन के लिए एकमात्र आत्मा की ओर आना पर्याप्त है। दर्शन तो विशुद्ध अध्यात्म की बात है।

भगवान महावीर ने कितनी साधना की, वर्षों तप किया लेकिन दिखावा नहीं किया, ढिंढोरा नहीं पीटा। जो कुछ किया अपने आत्म-दर्शन के लिए किया। सब कुछ पा लेने के बाद भी यही नहीं कहा कि मुझे बहुत कुछ मिला। प्रदर्शन करने से दर्शन का मूल्य कम हो जाता है। उसका सही मूल्यांकन तो यही है कि दर्शन को दर्शन ही रहने दिया जाए। जब प्रदर्शन के साथ दिग्दर्शन भी होने लगता है तो उसका मूल्य और भी कम हो जाता है। प्रदर्शन का मूल्य भी हो सकता है लेकिन उसके साथ दर्शन भी हो। जिसने स्वयं नहीं किया वह दूसरे को क्या करवा सकेगा?

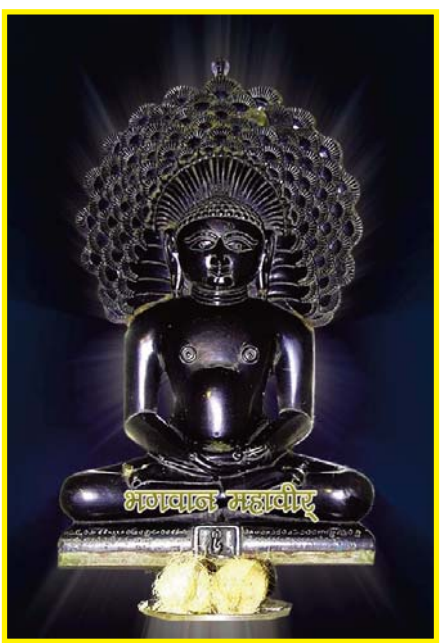

आज खान-पान, रहन-सहन आदि सभी में प्रदर्शन बढ़ता जा रहा है। आपका शृंगार भी दूसरे पर आधारित है। दूसरा देखने वाला न हो तो शृंगार व्यर्थ मालूम पड़ता है। दर्पण देखते हैं तो दृष्टिकोण यही रहता है कि दूसरे की दृष्टि में अच्छा दिखाई पड़ सकें। इस तरह आपका जीवन अपने लिए नहीं दूसरे को दिखाने के लिए होता जा रहा है। सोचिए, अपने लिए आपका क्या है? आपकी कौन-सी क्रिया अपने लिए होती है? सारी दुनिया प्रदर्शन में बहती चली जा रही है। जीवन में आकुलता का यह भी एक कारण है।

भगवान महावीर का दर्शन तो निराकुलता का दर्शन है। यह अनुभूतिमूलक है। प्रदर्शन में आकुलता है, वहां अनुभूति नहीं, कोरा ज्ञान है। भगवान महावीर, उस ज्ञान को महत्वपूर्ण मानते हैं जो अनुभूत हो चुका है। पराया ज्ञान कार्यकारी नहीं है, अपना अनुभूत ज्ञान ही कार्यकारी है। हमारे लिए जो ज्ञान, कर्म के क्षयोपशम से मिला है, वही ज्ञान सब कुछ है। भगवान का केवलज्ञान निमित्त बन सकता है, लेकिन उस ज्ञान के साथ हमारे अनुभव का पुट नहीं है। उनका अनंत ज्ञान क्षायिक ज्ञान है और हमारा क्षयोपशम ज्ञान है जो सीमित है। अनंत ज्ञान हमारे लिए पूज्य है, हम उसे नमस्कार कह देते हैं कि 'वंदे तद्गुण लब्धये'-आपके गुणों की प्राप्ति के लिए आपको प्रणाम करते हैं। गुणों की प्राप्ति स्वयं की अनुभूति से ही होगी।

स्वरूप का भान नहीं होने के कारण ऐसा हो रहा है कि अपने पास जो निधि है उसका दर्शन, उसका अनुभव भी हमें नहीं हो पाता। सारा जीवन दूसरे को देखने-दिखाने में व्यतीत हो जाता है और अधूरा रह जाता है। जो व्यक्ति अपने जीवन को पूर्ण बनाना चाहता है वह दूसरे पर आधारित नहीं रहेगा, दूसरे का आलम्बन तो लेगा लेकिन लक्ष्य स्वावलम्बन का रखेगा। आज तक हमारा जीवन, हमारा ज्ञान अधूरा इसलिए रहा क्योंकि दूसरे के दर्शन करने और दूसरे के माध्यम से ही सुख पाने का हमारा लक्ष्य रहा। अभी भी कोई बात नहीं है, जो होना था वह तो हो गया, लेकिन आगे के लिए कम से कम उस ओर न जाएं।

सुख की अनुभूति अपने ऊपर निर्धारित है। दूसरा कोई हमें सुख नहीं दे सकता। अनंत-चतुष्टय को धारण करने वाले भगवान भी हमें अपना सुख नहीं दे सकते। स्व-पर का भेद-विज्ञान यही है। सम्यग्दृष्टि कम हैं। मिथ्यादृष्टि की संख्या अनंत है। कोई कुछ भी कहे, हम अपने संसार के अभाव का प्रयत्न करें। सारे संसार की चिंता न करें। दिग्दर्शन वही कर सकता है जो स्वयं का दर्शन करता है।

चुनाव करने वाले आप हैं, प्रदर्शन आपको बहुत अच्छा लग रहा है किन्तु ध्यान रखिये कि सारा प्रदर्शनमय जीवन निरर्थक है। प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है, आप जैसा जीना चाहें जी सकते हैं। चूंकि आत्मोन्नति और आत्मोपलब्धि दर्शन से ही संभव है, इसलिए अपने जीवन को स्वयं संभालने का प्रयास करिये। ■

मनोविज्ञान

डॉ. भागरानी कालरा

स्वप्न वफादार प्रहरी है

स्वप्नों का अपना संसार है, वे वर्तमान अथवा तत्कालीन भूतकाल को निर्देशित करते हैं। एक दृढ़ धारणा है कि स्वप्न भविष्य की ओर भी इंगित करते हैं। श्री अरविंद तथा मदर के निद्रा तथा स्वप्न पर लिखे गये लेखों में एक यात्री के स्वप्न का वर्णन मिलता है। वह यात्री एक होटल में रह रहा था। उसे स्वप्न में एक लड़का दिखायी दिया जो उसके कथन के तख्त की ओर संकेत कर रहा था। जब वह सुबह उठा, तब वही लड़का उसी तरह की पोशाक में उसे होटल में दिखायी दिया, जो कि लिफ्ट की ओर संकेत कर रहा था। सहमा हुआ यात्री उस लिफ्ट पर नहीं चढ़ा और शीघ्र ही प्रतीत हुआ कि लिफ्ट क्रेश हो गयी है ओर जो व्यक्ति उसमें चढ़े थे, उनकी मृत्यु हो गयी।

सुप्रसिद्ध मनोविश्लेषक काली चुंग ने अपनी एक साठ वर्षीय रोगी युवती का जिक्र किया है, उसे स्वप्न आया कि वह मर गयी है और सचमुच तीन मास बाद उसकी मृत्यु हो भी गयी। स्वप्न में उसने देखा था कि एक कक्षा हो रही है। सब प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कब व्याख्याता उपस्थित होगा। बाद में विश्लेषण हुआ कि वह खुद व्याख्याता थी क्योंकि उसे मृतक व्यक्तियों को अपने जीवन के अनुभवों पर व्याख्यान देना था। सब लोग नये मृतक से ताजा जानकारी लेना पसंद करते थे। पृथ्वी पर हो रहे क्रिया-कलाप समय एवं स्थान का ध्यान मानों कुछ निर्णायक तत्व ले आयें।

19वीं सदी के जर्मन केमिस्ट फ्रेडरिक स्टेडोनिटिज इस खोज में थे कि बेंजीन मोलीक्यूल्स में एटम कण किस प्रकार व्यवस्थित है। सन् 1865 में वे एक घोड़ा गाड़ी में सवार थे, उन्हें झोंका-सा आ गया और उन्हें मोलीक्यूल्स नाचते हुए नजर आये। शृंखला की अंतिम कड़ी प्रारंभिक कड़ी से जुड़ गयी और एक गोलाकार छल्ला बन गया। इस प्रकार वे बेंजीन रिंग का आविष्कार कर सके। कोलरिज का कहना है कि उन्हें 'कुबला खान' कविता स्वप्न में ही सूझी थी। आर. एल. स्टीवनसन को 'जैकिल एण्ड हाइड' के कथानक का मोड़ स्वप्न में आभासित हुआ था। एक डॉक्टर को चिंता थी कि वह सुबह अस्पताल में समय पर पहुंच सकेगा अथवा नहीं। स्वप्न आया कि वह अस्पताल में ही है। डॉ. फ्रायड ने एक तर्जुबा किया अधिक नमकीन भोजन लेने के बाद सोये। उन्हें आधी रात को प्यास लगी और स्वप्न में उन्होंने मानों पानी पी लिया। ऐसे में स्वप्न ने क्रिया का रूप धारण कर लिया था।

एक मुहावरा है कि स्वप्न बदहजमी का परिणाम होते हैं। प्रश्न उठता है कि स्वप्न के उत्तेजक व स्रोत क्या हैं?

- बाह्य ज्ञान तंतु का उत्तेजित होना,
- आंतरिक ज्ञान तंतु का उत्तेजन,
- आंतरिक शारीरिक उत्तेजना,
- मानसिक स्रोत।

साइमन (सन् 1888) ने एक स्वप्न बताया कि कुछ भारी-भरकम देव बैठे हुए हैं और कुछ जोर-जोर से चबा रहे हैं। जोरों की आवाज उनके जबड़ों से निकल रही है। नींद खुली तो पता चला कि खिड़की के बाहर से एक घोड़ा गुजर रहा था। वह उसके खुरों की आवाज थी। शायद गुलिवर ट्रेवल्ज की कहानियां पढ़ने का कारण था।

मारी ने बताया था कि वे एक बार हल्का भोजन ले कर सोये। उनके स्वप्न में एक प्लेट, कांटा और एक बाजू दिखायी दिया और वह खाना खा रहा था।

मेयर ने अपनी कमीज अपने गले के पास जोर से बंद की हुई थी। उसे स्वप्न आया कि उसे फांसी पर लटकाया जा रहा है। रामनाथ ने अधूरे कपड़े पहन रखे थे तथा नींद में उसके ऊपर से चद्दर उतर गयी। उसे स्वप्न आया कि वह नंगा है और उसे हवा लग रही है। जितेन्द्र को स्वप्न आया कि वह ऊंचाई से गिर गया। वास्तव में उसकी एक बाजू शरीर से नीचे लुढ़की हुई थी और उसने अपनी मुड़ी हुई टांग का टखना लंबा किया था।

मानसिक स्रोत में इच्छापूर्ति के स्वप्न लिये जा सकते हैं। नरेश खास तरह का सोफा बनवाना चाहता था। स्वप्न में वह वैसे सोफे पर स्वयं आसीन था। बुढ़ापे में जवानी के स्वप्न, परीक्षा में फेल होने के स्वप्न व डर इत्यादि।

टाटा मैनेजमेंट ट्रेनिंग सेंटर, पूना के डॉयरेक्टर डॉ. फ्रांसिस मनेजिज की स्वप्न कार्यशाला प्रभारीगण एक्जीक्यूटिव्ज को दिखाने का प्रयत्न करती है कि स्वप्नों का अर्थ ग्रहण कैसे किया जाए। स्वप्नों द्वारा समस्या का समाधान कैसे किया जाए। चाहे हमारे स्वप्न गुंफित प्रतिमाएं-सी प्रतीत होती हैं, परन्तु पूरे स्वप्न की संरचना में प्रत्येक अंश कुछ महत्व रखता है, चाहे घास का तिनका हो या दीवार का रंग।

हमारे स्वप्नों का आधार हमारे भावावेश होते हैं। इच्छाएं तथा यश प्राप्ति की गाथाएं स्वप्न को जन्म देती हैं। बचपन, जवानी की यादें हमारे स्वप्नों में पहुंच जाती हैं। जागने और सोने की अवस्थाएं एक-दूसरे से विपरीत हैं, जाग्रतावस्था की इच्छाएं असंभव अथवा अवास्तविक होने पर दबा दी जाती है। अचेतन स्तर पर पहुंचकर ये इच्छाएं विद्रोह करती रहती है। बाहर आने का प्रयत्न जारी रहता है, परन्तु प्रहरी उन्हें बाहर आने से रोकता है। अत: जब प्रहरी जरा भी कम सजग हुआ तो ये भावनाएं वेश बदल कर स्वप्न में आ जाती हैं। उनका सिर, पैर जोड़ना मनोविश्लेषक का काम है। स्वप्न बड़ी घटना को संक्षिप्त कर देता है। विभिन्न टुकड़े इस प्रकार जुड़ते हैं कि पहचानना कठिन हैं, घोड़े-सा मुंह, शेर का सिर, गधे का कान, न घोड़ा, न शेर, न गधा भला कैसे पहचाने? स्वप्न संक्षिप्तीकरण के अलावा और भी कई प्रयुक्तियां प्रयोग में लाते हैं। यथा 'विस्थापन' प्रयुक्ति! जो घटना जिस स्थान पर हुई, वहां न होकर स्थान परिवर्तन कर देती हैं। मैं आफिस गया, फिर कुल्ला किया। स्वप्न का भूलना हमारी बाधा शक्ति पर निर्भर है। स्वप्न के भूलने के पीछे भी कई कारण हो सकते हैं। हमारी याद शायद झूठी हो, अव्यवस्था के कारण इसको क्रमबद्ध रूप से पुन: याद से लाना संभव न हो। बादलों की तरह यादें बिखर जाती हैं। उनके टुकड़े समेटने में कठिनाई हो। शायद इसका पता चल जाए कि प्रहरी कितना दबाव डाल रहा है। कई बार लगता है कि लंबा स्वप्न आया। सुबह याद करो तो छोटी-सी बात याद आती है। जागने के बाद ज्यों-ज्यों समय गुजरता जाता है और अधिक भूलता जाता है। आतिशबाजी की तरह मिनटों में गुल हो जाता है।

जब चेतन तथा अवचेतन मन के बीच चौकीदारी करनेवाला प्रहरी थोड़ा कमजोर हो जाए तो दबी इच्छाएं बाहर आने का प्रयत्न करती हैं। दिवास्वप्न में जिन इच्छाओं की पूर्ति यथार्थ में नहीं कर सकती, उन्हें मन-ही-मन कर लेते हैं। कल्पना में वह इच्छा पूरी कर लेते हैं। दिवास्वप्न हम सजाते हैं, उसका वहन सचेत रूप से होता है। दिवास्वप्न में कल्पना से ज्यादा स्वतंत्रता है।

यदि दिवास्वप्न में आप किसी पर्वतीय प्रदेश का भ्रमण कर रहे हों तो

यह संकेत है कि आप छुट्टी लेकर घूमने चले जाओ। यदि आप मंच पर नाटक करने का स्वप्न देखें तो संभव है कि व्यवसाय के रूप में आप इसमें सफलता पायें।

रोमन एंपरर (राज) ने एक व्यक्ति को मृत्युदंड दे दिया क्योंकि उसे स्वप्न आया था कि उसने राजा का कत्ल कर दिया है। यह सच है, जो ऐसा स्वप्न ले सकता है तो वह ऐसा कुकृत्य जाग्रतावस्था में भी कर सकता है। हम लोग कहते हैं न कि हम स्वप्न में भी ऐसा नहीं सोच सकते। फाफ का कहना है कि मुझे अपने कुछ स्वप्न बताओं और मैं आपको आपकी अंतर्रात्मा के बारे में सच बता दूंगा।

सच है, जीवन चर्या पवित्र तो स्वप्न भी पवित्र। ईसामसीह का कहना है कि बुरे ख्यालात हृदय से ही निकलते हैं।

स्वप्न एक वफादार प्रहरी है, जो हमें चिंता के मूल तक ले जाकर हमारी चिंता की मात्रा कम करता है। परकिन्जी का कहना है कि स्वप्न जाग्रतावस्था से उल्टा काम करता है, दु:खी को प्रसन्नता, आशा देता है। नफरत को प्यार तथा मित्रता में बदलता है।

बहुत से अपूर्ण बिना पचाये हुए विचार मनुष्य के दिमाग में एकत्रित होते हैं। जिस व्यक्ति में स्वप्न लेने की क्षमता न हो, वह मानसिक अव्यवस्था का शिकार बनेगा। दसों अंगुलियां हारमोनियम पर घुमाते रहने से संगीत की उत्पत्ति नहीं हो सकती। मक्खियों को एक बार बाहर निकालो वे पुन: लौट आती हैं। केन्ट-पागल व्यक्ति जाग्रतावस्था का स्वप्नद्रष्टा है। रेडस्टाक (सन् 1879) ने अपनी पुस्तक में स्वप्न तथा पागलपन में समानता दिखायी है।

हिस्टीरिया में घटनाएं अव्यवस्थित क्रम में दिखती है। सायकोसिस में इच्छापूर्ति के स्वप्न आते हैं। पेरानोइया में एक व्यक्ति अपनी स्त्री को बेवफा कह कर चिल्लाने लगा। ऐसा रोगी स्वप्न में छोटे-छोटे टुकड़े कर के बोलते रहते हैं। हिस्टीरिया में स्वप्न सुनाना शुरू करते हैं तो खत्म ही नहीं करते। एक मरीज का स्वप्न चार महीने उसी भाव पर चलता रहा। प्रेम-प्रसंग में लगता था कि अभी तो बात पूरी ही नहीं की।

स्वप्न तथा पागलपन में निर्णय शक्ति कमजोर हो जाती है तथा विचारों की शृंखला तितर-बितर हो जाती है। स्वप्न एक सेफ्टी वाल्ब का काम करता है। यदि स्वप्न न आये तो व्यक्ति पागल हो जाता है। स्वप्न के प्रतीक प्रत्येक के जीवन में अलग महत्व रखते हैं। वैसे सांप को धन का, सीढ़ी चढ़ना सेक्स का, नीचे गिरना मान-हानि के लक्षण माने जाते हैं।

स्वप्न कभी बचपन से सामग्री उठा लाते हैं, कभी भूले-बिसरे प्रसंगों से। डॉ. फ्रॉयड को किसी का स्वप्न आया, वह गांव का डॉक्टर था, परन्तु उसका चेहरा अस्पष्ट था। उसकी शक्ल अपने स्कूल के शिक्षक से मिलती-जुलती थी। समझ में नहीं आ रहा था कि दोनों में क्या साम्य था। मां से पूछने पर साम्य स्पष्ट हुआ कि शिक्षक भी एक आंख से काना था, डॉक्टर भी। वेस्काइड ने एक जान-पहचान के संगीतकार का उदाहरण दिया। उसे स्वप्न में एक धुन सुनायी दी, जो नयी महसूस हुई। सुबह उठ कर खोजने पर वही धुन संगीत की कापियों में लिखी पायी गयी। कोई भी व्यक्ति कई वर्षों से परदेस में रहते हुए, अपनों से दूर दु:ख-दर्द सहन करता है। कभी-न-कभी उसे जरूर स्वप्न आएगा कि वह अपने घर के निकट है। अपना घर उसे चमकता, दमकता, सुंदर, प्यारा दिखेगा, परन्तु खुद अपने आप को चिथड़ों में या धूल से भरा हुआ पाएगा। एन्डरसन की परी कथा में एक राजा की कथा वर्णित है। दो दर्जी उसकी कीमती ड्रेसे बनाते हैं और कहते हैं कि यह ड्रेस केवल किसी गुणी और वफादार आदमी को ही नजर आएगी। सारे दरबारी अपनी वफादारी बताने के लिए राजा के नंगा होने का ब्यौरा नहीं देते। जब राजा परेड ले रहा होता है, तब पास से ही एक छोटा बच्चा चिल्ला पड़ता है कि राजा तो नंगा है। यह स्वप्न बचपन की यादों के ताने-बाने से गुंथा है।

छोटे बच्चे को दो थप्पड़ लगा दो, शेम-शेम कह दो, वह फिर भी उछलता-कूदता रहेगा। बचपन का समय सुख का है और यही सुख हम बड़े होकर भी स्वप्न द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। अधिकतर स्वप्न, स्वप्न देखनेवाले व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसकी आयु, लिंग, स्तर, शिक्षा, रहन-सहन का ढंग, पिछली घटनाओं और अनुभवों पर आधारित होता है। स्वप्न रेचन का काम करते हैं। जाग्रतावस्था में जो स्वप्न व्यक्ति भूल जाते हैं। वह बीमार अथवा सोये हुए व्यक्ति स्मरण करते हैं। जिसका प्यारा बच्चा मर गया, उसे मातृत्व के स्वप्न आते हैं। जिसका पैसा बरबाद हुआ, उसे अमीरी के तथा जिसे प्यार में धोखा मिला हो, उसे चिंताजनक स्वप्न आते हैं।

स्वप्न एक वफादार प्रहरी है, जो हमें चिंता के मूल तक ले जाकर हमारी चिंता की मात्रा कम करता है। परकिन्जी का कहना है कि स्वप्न जाग्रतावस्था से उल्टा काम करता है, दु:खी को प्रसन्नता, आशा, दिलासा देता है। नफरत को प्यार तथा मित्रता में बदलता है।

-5, अरावली, कौशम्बी
गाजियाबाद-201010 (उ.प्र.)

धनिया के उपयोग

धनिये का प्रयोग हर परिवार में किया जाता है। हरे धनिये का प्रयोग चटनी के रूप में, सब्जियों में व सलाद में किया जाता है। धनिये को कूट-पीसकर (सूखे धनिये को) अलग से या अन्य मसालों में मिलाकर उपयोग किया जाता है। धनिये के खान-पान के अलावा अन्य भी घरेलू नुस्खे हैं।

- धनिये की तासीर ठण्डी होती है। धनिये का तेल, धनिये का शरबत गर्मी ऋतु में सेवन किया जाये तो बहुत गुणकारी रहता है।
- ज्वर में धनिये की गिरी सेवन कराने पर गर्मी के ज्वर (बुखार) को शांत करती है।
- पेट दर्द में- धनिये के तेल की मालिश पेट-दर्द में फौरन लाभ करती है। धनिये का अर्क भी पेट दर्द में लाभकारी रहता है।
- धनिये के तेल की मालिश करने से हाथ-पैरों की जलन व गर्मी नष्ट हो जाती है।
- सिरदर्द में- खासकर पित्त की अधिकता से होने वाले सिरदर्द में धनिये को पीसकर लेप करें तो आशातीत लाभ होगा।
- पेट में कब्ज होने पर धनिये और शक्कर को समभाग गर्म जल या गर्म दूध से रात को सेवन करने पर पेट की कब्ज दूर होती है। सेवन मात्रा 6 माशे से तोला तक लें।
- भूख न लगने पर धनिया और काला जीरा, सोंठ, सैंधा नमक मिलाकर चूर्ण बनाकर सेवन करें। दिन में दो से तीन बार। मंदाग्नि भी ठीक होती है और यकृत को शक्ति स्फूर्ति मिलती है।
- नेत्र ज्योति- हरा धनिया और त्रिफला पीसकर खाने से आंखों की कमजोरी दूर होती है और ज्योति बढ़ती है।
- मोतियाबिंद में- धनिया अर्क को आंखों में डालने पर अवश्य लाभ होता है।
- मुंह आने पर धनिये के बारीक चूर्ण को चासनी में या शरबत अंजबार मिलाकर मुंह आने या छाले पर लगाने से लाभ होता है।
- धनिये का पाक मस्तिष्क की शीतलता और स्मरण शक्ति के उपयोग के लिए बहुत लाभकारी है।

संस्कार बोध

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

जीवन में विवेक जागे

लाओत्से ने वृद्ध होने के बाद अज्ञात में प्रवेश किया। प्रस्थान से पूर्व वहां के सम्राट ने उनसे कहा कि- आपने जो साधना की है, अनुभव प्राप्त किए हैं, उन अनुभवों को पहले हमें बताएं फिर यहां से प्रस्थान करें। लाओत्से ने कहा 'मैंने जो कुछ भी पाया है और जो कुछ अनुभव प्राप्त किया है, वह बता नहीं सकता।' सम्राट ने बहुत दबाव डाला पर लाओत्से बिना कुछ कहे वहां से चले गए।

सम्राट को इसकी सूचना मिली तो उसने अपनी सब सीमा चौकियों पर सूचित किया कि लाओत्से अपने देश की सीमाओं से बाहर न निकल पाए। जहां भी वे मिलें, उन्हें पकड़ लें और उनसे उनके अनुभव लिखवाए जाएं। लाओत्से बचकर निकलना चाहते थे पर एक चौकी पर उन्हें पकड़ लिया गया और वहां पर नियुक्त राजपुरुष ने कहा कि- आप जा सकते हैं, हमें कोई ऐतराज नहीं, पर जाने से पूर्व वह सब कुछ लिख दीजिए जो आपने अपने जीवन में पाया और अनुभव किया है।

लाओत्से ने कहा कि यही तो सबसे बड़ी मुश्किल है। सत्य को कहा नहीं जा सकता। सत्य को कहा कि वह असत्य हो गया। राजपुरुष ने कहा कि मैं कुछ नहीं जानता। यदि मैंने आपको यहां से जाने दिया तो मुझे मौत की सजा हो जाएगी। मुझे बचाने के लिए ही आप कुछ न कुछ लिख दीजिए। कहते हैं कि विवश होकर लाओत्से को लिखना पड़ा और उन्होंने जो कुछ लिखा उसमें पहला वाक्य था कि ''सत्य को कहा नहीं जा सकता।''

लाओत्से जैसे व्यक्ति, जो कि जन्म के समय से लेकर पूरी तरह जागृत रहे, वे सत्य के बारे में कुछ कहने में असमर्थ रहे, तब भला सामान्य लोग सत्य के संदर्भ में क्या कह सकेंगे? हां, सत्य की तलाश कर सकते हैं, उसे जीवन का ध्येय बना सकते हैं। संभव है, आज की भाषा कल अनुभवों की भूमिका पर मौन संवाद बन जाए।

सत्य की साधना कठिन है। उसके लिए साधक को अपनी चर्या पर विशेष ध्यान देना होता है। चर्या चरित्र का दर्पण है। इसी पारदर्शिता में मन का परिष्कार सामने आता है। विकास का नया प्रारूप बनता है।

हम चर्या के बारे में विमर्श करें। कहा जाता है-'दिनचर्या निशिचर्या ऋतुचर्या यथोदितं।' जो व्यक्ति अपने दिन और रात की चर्या को और ऋतुचर्या को व्यवस्थित रूप से संपादित करता है, वह व्यक्ति स्वस्थ होता है।

स्वस्थ व्यक्ति वह होता है, जो चर्या का व्यवस्थित पालन करता है। प्रश्न उपस्थित होता है कि वह चर्या किसकी? साधु की या गृहस्थ की? प्रतिप्रश्न पैदा होता है कि साधु और गृहस्थ की चर्या में क्या अन्तर हो सकता है? चर्या की जो मूलभूत बाते हैं- खाना, पीना, सोना, बैठना, श्वास लेना, यह एक गृहस्थ भी करता है और एक साधु भी करता है। इन दो के बीच में हम भेद रेखा कहां खीचेंगे? क्या अंतर है, इन दोनों की चर्या में? स्थूल दृष्टि से देखा जाए तो कोई अंतर नहीं है। एक गृहस्थ भी चलता है, बोलता है, ठहरता है, खाता है और पीता है। आयारो में एक सूक्त है- अण्णहा णं पासओ परिहरेज्जा। जो इन दोनों के बीच में भेद रेखा उत्पन्न करता है।

> जो व्यक्ति द्रष्टा होता है, जागृत होता है, प्रबुद्ध होता है, उसका सब कुछ भिन्न ढंग से होता है। उसका उठना, बैठना, बोलना और चलना, कपड़े पहनना और सोना, यहां तक कि सोचना भी अन्यथा प्रकार से होता है।

जो व्यक्ति द्रष्टा होता है, जागृत होता है, प्रबुद्ध होता है, उसका सब कुछ भिन्न ढंग से होता है। उसका उठना, बैठना, बोलना और चलना, कपड़े पहनना और सोना, यहां तक कि सोचना भी अन्यथा प्रकार से होता है। इसका मतलब यह हुआ कि गृहस्थ अपनी जीवनचर्या को जिस ढंग से संपादित करता है, साधु की जीवन चर्या वैसी नहीं होती, उसमें बहुत बड़ा अन्तर होता है। साधु चर्या के बारे में बहुत लोगों की यह धारणा है कि यह दुष्कर होती है। इसके लिए अतीत में जो विशिष्ट संन्यासी या महापुरुष हुए हैं, उन्हें उद्धृत किया जाता है। उनकी चर्या को प्रमाण माना जाता है। हम जिस परिवेश में जी रहे हैं, वहां मुख्य रूप से बुद्ध और महावीर की चर्या को वर्णित किया जाता है। भगवान बुद्ध की चर्या मज्झिमनिकाय में काफी विस्तार से उद्धृत हैं और वहां पर स्वयं बुद्ध ने अपनी चर्या के बारे में जानकारी देते हुए कहा- ''तपस्या से मेरा शरीर कृश हो गया है। धमनियां दिखाई दे रही है और हड्डियां जीर्ण, शीर्ण हो चुकी हैं। सारे शरीर के रोम कूप गल गए हैं।'' उस चर्या की बात सुनकर श्रोता या पाठक के मन में यह विकल्प पैदा हो सकता है कि बौद्ध भिक्षुओं की चर्या कितनी दुष्कर है।

भगवान महावीर की दिनचर्या आगमों में पढ़ने को मिलती है। इस चर्या विवरण के आधार पर हम यह धारणा बनाएं कि जैन या बौद्ध साधुओं की चर्या बहुत जटिल या कठिन है तो बहुत एकांगी बात होगी, क्योंकि शरीर को कष्ट देना, न बुद्ध को अभीष्ट था और न महावीर को। उनके सामने एक ही लक्ष्य था- सत्य से साक्षात्कार। उस साक्षात्कार के लिए उन्होंने जो रास्ता चुना, उस रास्ते में जितनी जटिलताएं या कठिनाइयां आती, उन सबका मुकाबला तो उन्हें करना ही था।

'शरीर को जितना कष्ट दो, उतना ही लाभ होगा'- यह भगवान महावीर के दर्शन को गहराई से नहीं समझने का फलित है। भगवान महावीर ने कभी भी यह नहीं कहा कि शरीर को कष्ट देना धर्म है। उनकी साधना का मूलभूत आधार है- कर्म शरीर को कृश करना। इसमें जो उपाय अपनाए जाते हैं, उन उपायों को काम में लेते समय किसी भी प्रकार की शारीरिक या मानसिक संक्लिष्टता का अनुभव होता है, तो समभाव से सहन करना, समता रखना और उसे भी प्रसन्नता से स्वीकार करना साधना है।

संक्लेश को कभी भगवान ने धर्म माना ही नहीं। स्वीकृत साधना में यदि संक्लेश का अनुभव होता है तो साधक अपने धर्म से विमुख होता है। उसके सामने किसी भी प्रकार की परिस्थिति पैदा हो, अनुकूल या प्रतिकूल, दोनों परिस्थितियों में साधना का सूत्र यदि समता से जुड़ा रहता है तो वह अपनी चर्या में अधिक जागरूक बन सकता है। अच्छे जीवन के लिए यही अभीष्ट है। ■

पाथेय

आचार्य सुदर्शन

अंधकार से उबारता है गुरु

यह देश योग दर्शन के महान आचार्य पतंजलि का देश है, जिन्होंने पतंजलि योगसूत्र रचा। हमारे देश के महापुरुषों ने बाहर से आए अतिथियों का भी उदारता से सम्मान किया। हमने हर संस्कृति से सीखा, हर संस्कृति को सिखाया।

परन्तु अफसोस है कि आज हमें अपनी अंतस्प्रज्ञा का ज्ञान स्वयं नहीं रह गया है। आज हम भी मूर्च्छित अवस्था में हैं। न देखने के लिए आंख, न सुनने के लिए कान और न ही अनुभव करने के लिए हृदय है। आज फिर से आवश्यकता है, हमें उठ खड़े होने की, ताकि समाज के लोग जागृत हो सकें, निर्भय हो सकें और जो जीवन का उद्देश्य है उसे प्राप्त कर सकें।

आज के दौर में गुरुओं के प्रति भी समाज में कहीं न कहीं श्रद्धा, आस्था है। परन्तु यहां हमें यह जरूर देखना होगा कि परमात्मा की राह पर चलते समय वह मात्र एक निर्देशक का कार्य करता है, क्योंकि वह स्वयं भी इसी राह का निकला एक ऐसा पथिक होता है, जो कुछ पड़ाव पार कर पहले ही हमसे आगे बढ़ चुका होता है, प्रभावित करता है और अंततः परिवर्तित करने का प्रयास करता है। वह शिष्य में सेवा और प्रेम को, दया और करुणा को, ध्यान और योग की भावना को प्रदीप्त करता है।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने गुरु की महत्ता में कहा है:

बंदऊं गुरु पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि।
महामोज मत पुंज, जासु वचन रविकर निकर॥

मैं उन गुरु के कमलवत श्री चरणों की वंदना करता हूं, जो कृपा के सागर हैं, मानव देह में भगवान हैं और जिनके वचन माया-मोह के गहन अंधकार को नष्ट करने के लिए सूर्य की किरणों के समान हैं। परन्तु मैं तो कहूंगा कि ऊंचे पद पर आसीन गुरु की जिम्मेदारी तब और बहुत ज्यादा बढ़ जाती है जब वह आदर्श रूप में पूजा जाने लगता है। तब ऐसे में समाज के प्रति उनका उत्तरदायित्व होता है- शांति की अखंड धारा को बहाना, विश्व बंधुत्व की भावना को जागृत करना।

गुरु शब्द में गु का अर्थ है-अंधकार और रु का अर्थ है दूर करना।

अर्थात् गुरु वह है जो समस्त मानवता को अंधकार से उबारकर उजाले की ओर ले जाए।

वस्तुतः भक्त और भगवान के बीच गुरु सेतु का कार्य करता है। वह द्वार है दीवार नहीं। यदि ऐसा न होता तो कबीर को गुरु रामानंद नहीं मिलते, चंद्रगुप्त को कोई चाणक्य नहीं मिलता। मीराबाई, सहजोबाई, दयाबाई, कर्माबाई सबको गुरु मिले। गुरु को मानने से ज्यादा, जानना जरूरी होता है। तभी तो कहावत है कि गुरु करें जानकर, पानी पीएं छानकर। एक सद्गुरु का लक्ष्य ही होता है वह शिष्य के जीवन को सफल बनाने के लिए आध्यात्मिक वैभव को लुटाते रहे। गुरु अध्यात्म का जीवित स्मारक है। इसीलिए गुरु में ही एक गुरुत्वाकर्षण बल होना चाहिए। उसे शिष्य को अपनी अनुभूतियों के आंगन में बैठाकर गुरुता को धन्य करने का प्रयास करना चाहिए। शिष्य रोगी है, तो गुरु उसका चिकित्सक। शायद यही कारण है कि भारतवर्ष में आज भी वर्ष में कम से कम एक बार शिष्य, गुरुपूर्णिमा के पावन पर्व पर अपने गुरु के धाम पहुंचकर अपनी की गई अच्छाइयों एवं बुराइयों का आत्म विश्लेषण जरूर करना चाहता है।

यहां गुरु की जिम्मेदारी और बढ़ जाती है, जबकि उसे आवश्यकता होती है, अपने शिष्य के अंदर ऐसे विचार को आत्मसात् कराने की, ताकि उसका जीवन अच्छी तरह से निर्मित हो सके। ऐसे में शिष्य को भी चाहिए कि यह प्रयत्नपूर्वक गुरु की आराधना करे। सनातन धर्म के सफल संवाहक आदि गुरु शंकराचार्यजी ने भी कहा है कि मंत्र केवल वह नहीं होते जो वेदादि ग्रंथों में लिखे गए हैं। ■

सुखी परिवार अभियान के प्रणेता,
आदिवासी जन-जीवन के मसीहा एवं अहिंसा के प्रेरक
गणि राजेन्द्र विजयजी म.सा. के प्रथम वर्षीतप पारणा
एवं
मुनिश्री रश्मेन्द्र विजयजी म. के 14वें वर्षीतप पारणा
के अवसर पर आप सभी सादर आमंत्रित हैं

सान्निध्य साहित्य मनीषी आचार्य श्रीमद् विजय वीरेन्द्रसूरीजी म.सा

दिनांक: 23-24 अप्रैल 2012
स्थान: सुखी परिवार एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय
छेदी वासन रोड, पो. कवांट, जिला-वडोदरा (गुजरात)

:: निवेदक ::

अशोक एस. कोठारी (अध्यक्ष) | दिनेश मेहता (मंत्री) | ईश्वरभाई राठवा (अध्यक्ष-गुजरात प्रांत) | विजयभाई राठवा (मंत्री-गुजरात प्रांत)

सुखी परिवार फाउंडेशन
संपर्क सूत्र: 09586981101, 09825741631

कविताएं

सफलता का मंत्र

डॉ. प्रीत अरोड़ा

खुली आंखों से देखें मैंने कुछ सपने
सपने तो सपने हैं कब हुए अपने
टूटेंगे सपने इस डर से मन घबराया
दुख के गम से दिल भर आया
कुछ नहीं अपना सब कुछ है पराया
है प्रभु मेरे, कैसी है तेरी माया
रोते रोते आंखों में नींद भर आई
दिल-दिमाग की हुई लड़ाई
तभी अचानक आत्मा की इक आवाज आई
उठो चलो हों जाओ तैयार
समय नहीं करता है इंतजार
सपनों को गर करना है साकार
तो व्यर्थ न गवाओं समय बेकार
जिसने भी इस मंत्र को जाना
पड़ा नहीं उसको पछताना
क्योंकि
मेहनतकश को मेहनत का सिला मिला है
आदमी तो क्या, ढूंढे से खुदा मिलता है
बस फिर क्या था
नया जोश नयी जवानी
बन गयी अपनी कहानी
आखिर मेरा परिश्रम रंग लाया
जो चाहा सब कुछ पाया
दिल दिमाग न अब मेरे घुमे
सफलता मेरे चरण चूमे
लेखनी ने करतब दिखलाया
निराशा का अंधकार भगाया
मेरा सबसे है अनुरोध
निराशा का तुम करो प्रतिरोध
दिल-दिमाग पर कभी न जाओ
आत्मा को अपना दोस्त बनाओ
आशा का तुम दीप जलाओ
जीवन अपना सफल बनाओ।

-405, गुरुद्वारा के पीछे
दशमेश नगर, खरार
जिला-मोहाली-140301 (पंजाब)

गीत

डॉ. राधेश्याम शुक्ल

ओ मेरे मन, छन भर थम जा,
थक गया बहुत, सुस्ताने दे।
तूने दी हिरना-प्यास जगा,
मैं भटका रेगिस्तानों में,
सपनों में जिया नदी-निर्झर,
पानी-पानी अनुमानों में।
मैं जी लूंगा यह प्यास किन्तु,
यह भरम नहीं जी पाऊंगा,
'अन्तस की गंगाजली' दिखा,
डूबने और उतरने दे।
मैं तेरे संग बेपंख उड़ा,
धरती, आकाश, 'पतालों' में,
जीवन ने मुझे जी लिया पर,
मैं जीता रहा ख्यालों में।
'दर्शन' की आंखों से देखा,
'पोथी' की 'बानी' में बोला
अब बस कर मुझे 'कबीर' बना,
उलझने सहज सुलझाने दे।
मैं 'पत्थर' बना, कभी 'लोहा',
फिर बना कभी 'चानी', 'सोना',
मैं 'चीज' बना, बाज़ार बिका,
मेरा हंसना, मेरा रोना।
दुनियां भर के आईने में,
मैं अलग, अलग मेरी छाया,
यह दुविधा मिटा, मीत मेरे,
मुझको खुद से मिल जाने दो।

-392, एम.जी.ए., हिसार (हरियाणा)

आ भी जाओ...

विभा जैन

आ भी जाओ के नज़र तुम पे लगाए बैठे।
तेरी राहों में सनम्, दिल को बिछाए बैठे॥
कुछ ना पूछो के दिन कैसे गुज़ारा हमने।
सरेशाम से शम्मे को जलाएं बैठे॥
सांसें आती हैं और सांसें जाती है।
धड़कनों में तेरा नाम बसाए बैठे॥
छलक जाए न कहीं जाम अब आंखों के।
अश्क़ पलकों पे यूं हम तो सज़ाए बैठे॥
चैन लुटा है क़रार भी ले लिया तुमने।
तेरी यादों में हम खुद को ही भुलाए बैठे॥

-'सम्यक् द्वीप', 85 त्रिमूर्ति नगर, धार (म.प्र.)

सत्य की किरणें

मोहन उपाध्याय

(1)
स्वास्थ्य सदा उत्तम रहे, साधन यही महान।
सर्वोन्नति का मूल यह, रखना इसका ध्यान॥
(2)
याचक बन बैठे हुए, ये हैं कर्मविहीन।
बिन परिश्रम फिर क्या मिले? इसीलिए हैं दीन॥
(3)
जग में नित्य नवीनता, जग में नित बदलाव।
नित नूतन सौंदर्य का, यही एक तो भाव॥
(4)
सम्मुख है पुस्तक खुली, जो कि प्रकृति कहलाय।
जो पढ़ता है ध्यान से, तो मंगल हो जाय॥
(5)
उल्लू बैठे शाख पर, देख न पाते धूप।
जब आंखें ही बंद हैं, कैसे निरखे रूप?
(6)
जब पैसा दिखने लगे, बिक जाते हैं लोग।
उनको आकर्षित करे, नये-नये नित भोग॥
(7)
झगड़े होते वैर से, नहीं सत्य का ज्ञान।
अगर सत्य का ज्ञान है, फिर सब मित्र समान॥
(8)
यदि इच्छा है ठीक तो, ठीक मिलेगा ज्ञान।
अगर ज्ञानयुत आचरण, फिर निश्चित कल्याण॥
(9)
सत्य न्याय जो छोड़ते, पाते कष्ट अपार।
छुटकारा पाना अगर, कर लो उपकार।
(10)
मांग रहे अधिकार हैं, नहीं कार्य का ध्यान।
बिन परिश्रम संसार में, मिलता है अपमान॥

-26/117, क्रिश्चियनगंज, विकासपुरी
अजमेर-305001 (राजस्थ ान)

अजुंली भर प्यार

पूनम माटिया

इस सफर में चलते-चलते मिलेंगे बहुत
प्यार से लगेंगे गले या काट सकते हैं गला भी
बात बनती है जब उठे हस्त आशीष के लिए
या फिर किसी असहाय की मदद के लिए
हाथ-हाथ को थाम ले बढ़े मंजिल की ओर
कहानी ऐसी लिखे इस जिंदगानी के पथ पर
जो सागर से हो गहरी और ऊंची आसमां से
जीत लिखो या हार लिखो, बस मेरे दोस्त
इक अंजुली-भर निस्वार्थ प्यार लिखो।

-मैरीके ब्यूटी कंसल्टेंट
पॉकेट-ए, 90-बी, दिलशाड गार्डन
दिल्ली-110095

दुनिया एक शामियाना है

पंकज शर्मा

दुनिया...यह दुनिया... एक शामियाना है।
और हम सब इसके नीचे एक मेहमान की तरह
आते हैं, जिंदगी बिताते हैं और...चले जाते हैं
पता नहीं कहां...? और शामियाना...वैसा का वैसा
तना रहता है वहीं रहता है शामियाना...
जो एक का नहीं है किसी का भी नहीं है
है भी और नहीं भी है, शामियाना वहीं है।
शामियाने का अपना कोई न रंग है न रूप है
जिसकी जैसी हो नजर वैसी छांव-धूप है
उमंग हो उल्लास हो जोश हो जज्बात हो
अपने प्रियों का साथ हो खुशियों की बरसात हो
तो यही शामियाना रंगीन नजर आता है
इन्द्रधनुष सा तन जाता है वर्ना...
दुख में, अवसाद में, उदासी में, निराशा में
दिल पर चोट लगने पर अपनों के बिछुड़ने पर
यही शामियाना एकदम सफेद हो जाता है
या स्याह नजर आता है
दुनिया रूपी इस शामियाने तले ये खेल खेले जाते हैं
जीवन से लेकर मृत्यु तक...आने से लेकर जाने तक...
शामियाने से शमशान तक...और शामियाना...
शामियाना यूं ही रहता है
दुनिया...एक शामियाना है।

-19, सैनिक विहार, विकास पब्लिक स्कूल के सामने,
जण्डली, अम्बाला शहर-134002 (हरियाणा)

शार्टकट

पूनम अग्रवाल

मैं मलिन नदी,
शकुंतला की अठखेलियों को
करीब से देखा है मैंने,
'भारत' ने जिससे पाया
अपना नाम उस भरत को
स्पर्श किया है मैंने।
तब वेग था मेरे मन में,
धैर्य था मेरे तन में।
समय बीता-
आज मैं त्रस्त हूं,
तन-मन से ध्वस्त हूं।
सूख गया है तन मेरा,
टूट गया है मन मेरा।
मेरे उस और बसे
लोग आज भी
इस और आते हैं।
रोंद कर सभी मुझे
निकल जाते हैं।
उनके लिए मैं कुछ भी नहीं
सिर्फ एक 'शार्ट कट' हूं।

-ए-504, समय अपार्टमेंट,
अम्बावाडी, आजाद सोसायटी
के पास, अहमदाबाद

याचना

स्नेह बंसल

प्रभु
मैं हर क्षण तेरे आने की
राह तकती रही
कभी खुली, कभी अधखुली
और कभी बंद पलकों से
तेरे नजारे को तकती रही।
आप आए न जाने किस क्षण
प्यार से लोरी सुना
सुला गये
और मैं अभागी।
तुम्हारी चरण धूलि से वंचित रह गई
मेरे प्रभु अपनी दासी को
इस तरह न सताइये
चरण रज पा लेने के
सक्षम बनाइये।

-5012, गुरुनानक मार्ग
अम्बाला छावनी (हरियाणा)

सृजन प्रक्रिया

मीना गुप्ता

कहते हैं पीड़ा सृजन का अंग है
कितनी पीड़ा सहती है सीप?
एक मोती को जन्म देने में?
सुन्दर सृजन बिना पीड़ा के
कब हो पाया है?
लेकिन जब पीड़ा धनी हो जाती है
तो बरसना ही पड़ता है उसे नयनों में
बदली सी छाती और बरसने को भी
रोकूं कैसे? बरसना तो नियति है।
वरना जमा हुआ अवसाद
गहराता चला जायेगा अन्दर बाहर
दोनों को जख्म देता रहेगा
इसलिए बदली बन बरसना कहीं
बेहतर है, घुट घुटकर मर जाने से।

-निराला साहित्य परिषद
मो. कटरा बाजार, महमूदाबाद (अवध)
जिला-सीतापुर (उ.प्र.)

जीवंत मन रहना

श्याम श्रीवास्तव

धूप सहना, छांव मत गहना
तुम्हें मेरी कसम।
अंत तक, जीवंत मन रहना
तुम्हें मेरी कसम।
आग में तप, स्वर्ण की
काया दमकती है।
धूप पाकर, गंध कुछ
ज्यादा महकती है।
जो तपा, निखरा वही
यह सोचकर।
यदि कभी दहला पड़े
दहना, तुम्हें मेरी कसम।
मौन से मंतव्य ज्यादा
ही उलझता है
मोल आंसू का जमाना
कब समझता है
सत्य कटु भी हो, मगर हमराज से
यदि कभी कहना पड़े,
कहना, तुम्हे मेरी कसम।
टूटता है कुछ न कुछ
नूतन बनाने में
नहीं सहती धरा
फसलें उगाने में
सृजन की यदि राह
धरना पांव तो
पीर जो सहना पड़े,
सहना, तुम्हें मेरी कसम।

-988, सेक्टर-आई
कानपुर रोड, लखनऊ-12 (उ.प्र.)

करुणा

केवल गोस्वामी

आंखों से दो बूंद बह गई
मन हल्का हो गया लगा यूं
जब सागर हो भीतर झिलमिल
क्या माने दो बूंदों के फिर
रोज़ गिरे हर वक्त गिरे
फिर भी सागर न होना है कम
दुख तो भाई सगा तुम्हारा
इसके बिना जो बीता पल छिन्न
समझो वह था नहीं तुम्हारा
फिर अपनों से कैसा शिकवा
जैसा भी है अपना तो है
सुख की छाया-माया साथी
सच के आगे सपना तो है
तेरे हिस्से में हो यह सब
ऐसी बात नहीं है भाई
दुख से विकसित इस पौधे ने
कितनों के घर ली अंगड़ाई
उस पर भी यह सितम है यारों
दुख को अपना कोई न जाने
सुख के सपने धारे मन में
लब पे भले हो, गम के गाने
धूप छांव का नाम है जीवन
इसी में यारो है अपनापन
धूप में धीरज धरो अगर तुम
छांव की सुन पाओगे सरगम
रोज गिरे हर वक्त गिरे
फिर भी सागर न होता है कम।

-जे-363, सरिता विहार, मथुरा
रोड, नई दिल्ली-110076

तीन क्षणिकाएं

पुखराज सेठिया

आजकल रिश्ते
स्नेह की बजाय
स्वार्थ पर बनते हैं,
तभी तो बनने से पहले
टूटते नजर आते हैं।
खूबसूरत चेहरों पर
बनावटी मुस्कान है,
इसीलिए आदमी
बाहर से भरा-भरा
अंदर से वीरान है।
क्यों होता है जरूरी
रिश्तों को 'कोई' नाम देना?
क्या अपनत्व भरे रिश्ते
शब्दों की सीमा में बंधकर
संकीर्ण नहीं हो जाते हैं?
'अनाम' रिश्तों का भी
अपना अस्तित्व होता है।
तभी तो अंतर्मन को छूने वाले
सभी खूबसूरत रिश्ते
अक्सर अनाम ही होते हैं।

-एम-25, लाजपत नगर-2
नई दिल्ली-110024

धर्म-आस्था

चमत्कारिक तंत्रपीठ हुम्बच

निधि जैन

23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का जन्म ईसा पूर्व 877 में वाराणसी में राजा अश्वसेन के यहां हुआ। तीस वर्ष की आयु में उन्होंने श्रमण दीक्षा ली। और 100 वर्ष की आयु में बिहार प्रांत के सम्मेद शिखर पर्वत से निर्वाण को प्राप्त किया।

एक बार पार्श्वकुमार अपने राजमहल में बैठे झरोखे से नगर की चहल-पहल देख रहे थे। उन्होंने देखा...नगर के बाहर एक पंचाग्नितप में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त 'कमठ' नाम का तपस्वी धूनी जलाकर तप कर रहा था। जनता दर्शनों के लिए उमड़ पड़ी थी। राजकुमार भी हाथी पर बैठकर वहां पहुंचे। उन्होंने अपने विशिष्ट ज्ञान (अवधिज्ञान) से देखा कि जलनेवाली एक लकड़ी में बैठा नाग-नागिन का जोड़ा भी जलकर स्वाहा हो जाएगा। उन्होंने अपने महावत से जलती लकड़ी को बाहर निकलवाकर नाग-नागिन को बाहर निकलवाया। पार्श्वकुमार ने उन्हें महामंत्र-णमोकार सुनाया। जिसके प्रभाव से मरने के बाद उन्होंने पति-पत्नी के रूप में धरणेन्द्र-पद्मावती नामक देव-देवी का जन्म लिया।

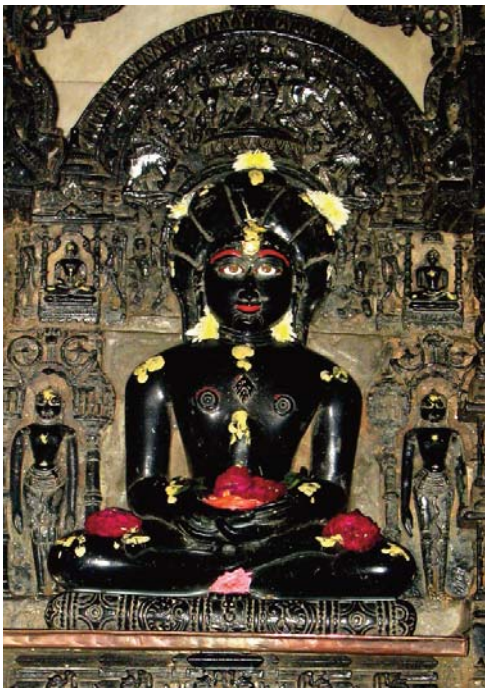

तपस्वी कमठ भी मरकर मेघमाली नामक देव हुआ। एक बार पार्श्वनाथ जंगल में ध्यानास्थ थे। उस समय मेघमाली देव इधर आ निकला। उसे पूर्वजन्म का प्रसंग याद आया। उसने ऐसी मूसलाधार वर्षा की, जिसके पार्श्वनाथ के गले तक पानी पहुंच गया। तब पद्मावती और धरणेन्द्र के आसन हिल उठे। दोनों तुरंत वहां पहुंचे। पद्मावती ने भगवान पार्श्वनाथ को अपने सिर पर उठा और धरणेन्द्र ने सर्प का रूप धारण कर अपने फणों के छत्र से प्रभु के सिर को ढक लिया। जिससे मेघमाली देव ने लज्जित होकर अपने अपराध की क्षमा मांगी और चला गया। तब से धरणेन्द्र और पद्मावती प्रभु की सेवा में तत्पर रहने लगे। और प्रभु के यक्ष-यक्षिणी के रूप में प्रसिद्ध हुए। इस रूप में वह भगवान पार्श्वनाथ के उपासकों की मनोकामनाओं को पूर्ण करते हैं और उनके दु:खों, कष्टों व उपसर्गों का निवारण करते हैं। आबू के दिलवाड़ा मंदिर में पद्मावती की चमत्कारी प्रतिमा (मूर्ति) विराजमान है। हुम्बच तो पद्मावती देवी की एक महाचमत्कारी पीठ है।

हुम्बच, शिमोगा (कर्नाटक) से 57 कि.मी. दूर शिमोगा तीर्थाली सड़क पर स्थित है। जो सातवीं शताब्दी में संथारा राजवंश के संस्थापक जिन दत्तार्थ द्वारा स्थापित किया गया था। राजकुमार जिन दत्तार्थ ने उत्तरी मथुरा से आगे दक्षिण में एक राज्य स्थापित किया तथा हुम्बच को इसकी राजधानी बनाया।

हुम्बच, शिमोगा (कर्नाटक) से 57 कि. मी. दूर शिमोगा तीर्थाली सड़क पर स्थित है। जो सातवीं शताब्दी में संथारा राजवंश के संस्थापक जिन दत्तार्थ द्वारा स्थापित किया गया था। राजकुमार जिन दत्तार्थ ने उत्तरी मथुरा से आगे दक्षिण में एक राज्य स्थापित किया तथा हुम्बच को इसकी राजधानी बनाया। उसके पिता सकर महाराज उसको मारने को उद्यत थे, जिससे उसका सौतेला भाई मारीदत्त राजसिंहासन का द्वितीय उत्तराधिकारी बन सके। जब कुलगुरु को इस अनैतिक कार्य के विषय में ज्ञात हुआ तो उन्होंने जिन दत्तार्थ को मथुरा छोड़ने तथा पद्मावती देवी की प्रतिमा को अपनी पीठ के पीछे बांधे हुए, घोड़े की पीठ पर चढ़कर दक्षिण की ओर जाने की आज्ञा दी। राजा को जब यह ज्ञात हुआ तो उसने सेनापति को राजकुमार को पकड़ लाने की आज्ञा दी। लेकिन पद्मावती के प्रभाव से सेना उसके पास पहुंच नहीं पायी।

अत्यधिक थक जाने के कारण वह घोड़े से उतरकर एक वृक्ष की छाया में सो गया। निद्रा में उसे एक स्वप्न आया जिसमें उससे प्रार्थना की जा रही थी कि वह जंगल के निकट चारों ओर निवास करनेवाले लोगों की सहायता से उस स्थान पर राजधानी की स्थापना करे। इसके साथ उससे यह भी कहा गया कि पद्मावती देवी के चरणों से स्पर्शित धरातल की धातु स्वर्ण में परिवर्तित हो जाएगी। इसलिए यह स्थान हुम्बच के नाम से पुकारा गया, (होनु-ज) अर्थात स्वर्ण का जन्म-स्थान।

इस क्षेत्र की अधिष्ठात्री देवी पद्मावती की कृपा से इस वंश के राजाओं ने शताब्दियों तक इस राज्य पर शासन किया। इस चमत्कारिक तंत्र-पीठ की आश्चर्यजनक वस्तुए हैं-लक्की वृक्ष, जो सदैव हरा-भरा रहता है, ऐसा माना जाता है कि इसकी जड़ें श्री पद्मावती देवी की पवित्र चौकी के नीचे हैं। मोती तालाब-इसके विषय में कहा जाता है कि भीषण अकाल के समय जब अन्य सारे तालाब सूख जाते हैं, ऐसे समय में भी इसमें जल भरा रहता है। इस सरोवर का नाम मोती तालाब इसलिए पड़ा कि यहां का पूर्व राजा प्रतिदिन इस तालाब में स्नान करके देवी की पूजा-अर्चना किया करता था। एक दिन स्नान करते समय उसे तालाब में दो मोती मिले थे।

-बी-5/263, यमुना विहार, दिल्ली-53

फायदेमंद खुराक

आप स्वस्थ व खुशहाल रहें, इसके लिए आपको अपनी सेहत का खास ध्यान रखना होगा। कुछ ऐसे पदार्थ हम आज बताते हैं जिन्हें आप अपने भोजन में शामिल करें तो शरीर को पूरी तरह फिट रख सकते हैं।

● टमाटर का उपयोग आप सब्जी में या सलाद के रूप में भी कर सकते हैं। टमाटर से खून बढ़ता है। टमाटर का सूप रोज खाने के पहले लेने से भूख भी अच्छी लगती है।

● नींबू थकान दूर करता है, कई बीमारियों से बचाता है। दमा, खांसी व जुकाम वालों को नींबू सेवन बिना मार्गदर्शन के नहीं करना चाहिए। नीबू अधिक अम्लीय होता है इसके लिए इसमें काला नमक मिलाकर लेना चाहिए। गुनगुने पानी में नींबू व शहद डालकर पीने से वजन घटता है। नींबू रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाता है।

● खीरे को सलाद या सब्जी दोनों रूप में खा सकते हैं। इसके नियमित सेवन से शरीर में पानी की कमी नहीं होती है। पानी की मात्रा पर्याप्त होने से बीमारी नहीं होती है।

-मुकेश अग्रवाल

मान्यता

चंद्रमोहन

परशुरामजी आर्य संस्कृति के संस्थापक तो थे ही साथ ही वेदों के ज्ञाता, सत्यवादी, महाप्रतापी दृढ़ निश्चयी एवं विजेता थे। हिन्दू मान्यता के अनुसार परशुरामजी को भगवान विष्णु का छठा अवतार माना जाता है।

विष्णु के छठे अवतार हैं परशुरामजी

परशुरामजी का जन्म वैशाख शुक्ल अक्षय तृतीया के पवित्र दिन हुआ था। परशुरामजी ने प्रथम शिक्षा अपने पिता महर्षि जमदग्नि से प्राप्त की थी उसके बाद कवि चायमान से शास्त्र विद्या ग्रहण करने के पश्चात स्वयं भगवान शंकरजी से शस्त्र विद्या ग्रहण की थी। भगवान शंकर ने परशुरामजी को लोककल्याण के लिए फरसा व धनुष दिए थे। परशुरामजी सिद्देश्वरी देवी को अपने अंत:करण में स्थान देकर अनेक सिद्धियां भी प्राप्त की थी। परशुरामजी ने उड्डनाथ से आकाश विचरण एवं जल विचरण की भी विद्या ग्रहण की थी। वह मन की गति से आ-जा सकते थे।

परशुरामजी का काल शतपथ काल का प्रारंभ था। सभी बड़े राजा-महाराजा उनके शिष्य होने पर गर्व का अनुभव करते थे। महाभारत काल में गुरु द्रोणाचार्य, बलराम, भीष्म पितामह, कर्ण आदि इन्हीं के शिष्य थे। श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र भी परशुरामजी ने ही प्रदान किया था। परशुरामजी की माता का नाम रेणुका था। जमदग्नि आश्रम में माता रेणुका को सभी शिष्य अंबा नाम से संबोधित करते थे। वह सभी शिष्यों से मां जैसा स्नेह करती थी तथा आश्रम में सभी शिष्यों की भोजन व्यवस्था एवं महर्षि के सभी कार्यों का ध्यान रखती थी।

एक बार माता अंबा पति की आज्ञा से अपने पिता के घर जा रही थी। रास्ते में रक्त-पित्त पीड़ित गंधर्वों को देखकर स्नेहवश उनके उपचार में लग गई। उनके रोग-उपचार में माता अंबा को काफी समय लग गया। महर्षि जगदग्नि ने एक-एक करके अपने पुत्रों को माता अंबा को बुला लाने के लिए भेजा परन्तु पीड़ितों को असहाय छोड़कर वह आ न सकी। इसके बाद महर्षि ने परशुरामजी को माता को बुलाने के लिए भेजा। परशुरामजी ने वहां पहुंचकर पिता की आज्ञा से माता अंबा को अवगत कराया लेकिन माता अंबा के सामने फिर वही धर्मसंकट था कि पीड़ितों को असहाय स्थिति में छोड़कर कैसे जाए। परशुरामजी जानते थे कि रक्त पित्त रोग का कोई उपचार नहीं बल्कि रोग और बढ़ सकता है। अत: परशुरामजी ने पीड़ितों को अपने फरसे से रोगी जीवन से मुक्ति दिलाकर माता अंबा को अपने साथ वापस बुला ले गए। अंबा की आश्रम वापसी में अधिक विलंब होने से महर्षि जमदग्नि काफी क्रोधित हुए तथा अपने पुत्रों को अंबा का सिर अलग करने की आज्ञा दी।

परशुरामजी का काल शतपथ काल का प्रारंभ था। सभी बड़े राजा-महाराजा उनके शिष्य होने पर गर्व का अनुभव करते थे। महाभारत काल में गुरु द्रोणाचार्य, बलराम, भीष्म पितामह, कर्ण आदि इन्हीं के शिष्य थे। श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र भी परशुरामजी ने ही प्रदान किया था।

उस समय आश्रम में ब्रह्मर्षि वशिष्ठ भी उपस्थित थे। सभी बड़े पुत्रों ने मातृ स्नेह के कारण माता अंबा का वध करने से इंकार कर दिया। वशिष्ठ ऋषि ने भी जमदग्नि को काफी समझाया तथा बताया कि अंबा जैसी जनकल्याणी स्त्री आज संसार में नहीं है। ऐसी स्त्री का वध उसी के पुत्रों के हाथों से हो तो यह धर्म की पराकाष्ठा होगी। आर्यवर्त पर गहरा कलंक होगा। परन्तु जमदग्नि ने अपने पुत्र परशुराम को माता अंबा का सिर अलग करने को कहा। परशुरामजी ने मातृ शुद्धि को मातृ स्नेह से कहीं अधिक उच्च माना तथा सिर अलग करने के लिए अपना फरसा उठाया। यह जानकर कि पिता की आज्ञा मातृ प्रेम से ज्यादा उच्च है। लेकिन दूसरी ओर माता के वध का मतलब था स्वयं का भी वध करना।

सहस्त्रबाहु अर्जुन ने जमदग्नि आश्रम में महर्षि से इस श्राप को वापस लेने को कहा। सहस्त्रबाहु ने महर्षि जमदग्नि से राजगुरु पद ग्रहण करने तथा उनकी प्रिय कामधेनु गाय भी देने को कहा। महर्षि जमदग्नि ने इस सभी को स्वीकार करने में असमर्थता व्यक्त की। इस पर क्रुद्ध होकर और अपना अपमान जानकर सहस्त्रबाहु अर्जुन ने जमदग्नि को अपने बाणों से घायल कर दिया तथा आश्रम को तहस-नहस कर दिया एवं पर्ण कुटीर को जला दिया। परन्तु वह महर्षि जमदग्नि को अपनी ताकत एवं अहंकार से किंचित मात्र भी न झुका सका तथा वहां से सेना सहित वापस चला गया।

अधिक रक्त बह जाने के कारण जमदग्नि ऋषि स्वर्ग सिधार गए। जब परशुरामजी को इस जघन्य कांड का पता लगा तो उन्होंने पीछा करते हुए सहस्त्रबाहु को तृत्सुग्राम में पकड़ा। यहीं पर भयंकर युद्ध में परशुरामजी ने अपने फरसे से सहस्त्रबाहु अर्जुन को सेनासहित यमलोक पहुंचा दिया। इस भंयकर युद्ध में रक्त के पांच सरोवर भरकर परशुरामजी ने भारत भूमि को आतताइयों, अधर्मियों से मुक्त किया था तथा अपने पिता के वध का बदला लिया था। मार्गव श्रेष्ठ परशुरामजी ने इस भारत भूमि को आततायी, दुष्ट, अधर्मी राजाओं से इक्कीस बार मुक्ति दिलाई थी। परशुरामजी आर्य संस्कृति के संस्थापक तो थे ही साथ ही वेदों के ज्ञाता, सत्यवादी, महाप्रतापी दृढ़ निश्चयी एवं विजेता थे। हिन्दू मान्यता के अनुसार परशुरामजी को भगवान विष्णु का छठा अवतार माना जाता है। ■

नित्यकर्म

डॉ. के. के. अग्रवाल

पूजा से हो दिन की शुरुआत

हम सभी पूजा करते हैं, लेकिन इसके चरणों को भी समझना आवश्यक है। वेदों के अनुसार पूजा कई प्रकार से की जा सकती है। यह षोडशोपचार (16 चरणीय), दशोपचार (10 चरणीय) या फिर पंचोपचार (5 चरणीय) पूजा हो सकती है। षोडशोपचार पूजा के प्रत्येक चरण का वैदिक अर्थ है। चूंकि मनुष्य के तन में ईश्वर का वास होता है, इसलिए हमें इन चरणों को अपनी दिनचर्या में शामिल करना चाहिए। शामिल ही नहीं, इसे अपनी दिनचर्या की नींव के रूप में अपनाना चाहिए। इन्हें अपने व्यवहार का आधार बनाना चाहिए। इन्हीं चरणों के आधार पर हमें अतिथियों का स्वागत भी करना चाहिए। वह इसलिए कि अतिथि को भी भगवान का रूप माना गया है। पूजा की शुरुआत ध्यान और आवाहन से की जाती है। यानी मूर्ति, तस्वीर या नारियल के रूप में स्थापित भगवान के आगे बैठना और अपने उस देवता का ध्यान करना, जिसे आप आमंत्रित करना चाहते हैं। अपनी प्रार्थना के साथ ध्यान द्वारा भक्त आमंत्रित किए जाने वाले देवता से एकात्म हो सकता है। इस चरण का सांकेतिक संदेश यह है कि व्यक्ति को रोज दिन की शुरुआत ध्यान से इसलिए करनी चाहिए ताकि वह अपने भीतर के अवगुणों को दूर भगा सके। छुपे काम, लोभ और अहम की भावना से ऊपर उठ सके। अपना निवास स्थल स्वच्छ करने के बाद ही हम किसी अतिथि को निमंत्रण देते हैं।

दूसरा चरण है आसन। भक्त भगवान को छूकर बैठने का आग्रह करता है। अतिथियों के संदर्भ में यह उनके हार्दिक अभिनंदन का संकेत करता है। अगला चरण है पद अर्थात आराध्य के चरणों को पखारना और उनके प्रति आदर का भाव व्यक्त करना। इसके बाद भगवान का हाथ धुलवाने (अर्घ्य) आचमन कराने और मधुवर्ग (मधु और दूध का पेय अर्पित करना) का चरण आता है। दैनिक जीवन में तीनों चरण बाहरी साफ-सफाई के संकेतक हैं। छठा चरण होता है अभिषेक या स्नान का। आराध्य का अभिषेक कराने के कई विकल्प हो सकते हैं- कोई जल का उपयोग करता है, तो कोई दूध का। कुछ गुलाब जल या चंदन के लेप या पंचामृत का भी उपयोग करते हैं। कहने का अर्थ यह है कि अभिषेक में उन्हीं चीजों का उपयोग किया जाता है जो प्राकृतिक हों।

सातवां, आठवां, नौवां, दसवां, ग्यारहवां और बारहवां चरण भगवान को विभिन्न वस्तुओं के अर्पण से संबंधित है। जैसे वस्त्र, गंध (चंदन, कुमकुम आदि), सोने-चांदी के आभूषण, पुष्प, माला और धूप इत्यादि। 13वां चरण दीप प्रज्वलित करने से संबंधित होता है। इसके बाद भगवान का भोग लगाया जाता है। भोग वही चीजें लगाई जाती हैं, जिनकी प्रकृति सात्विक होती है। सामान्यत: फल या फिर खीर-बताशे वगैरह। इसके बाद तांबूल (पान) अर्पित किया जाता है। 15वां चरण आरती का होता है। कपूर जलाकर मंत्रोचारण किया जाता है। मंत्रोचारण एक तरह से पूरे दिन के लिए हमारी दिशा निर्धारण करता है। अर्थात मंत्रोच्चार हमारी मंशा का प्रतीक होता है। आरती की समाप्ति दक्षिणा देने के साथ होती है। दक्षिणा दिन की शुरुआत भले कार्य की याद दिलाती है।

अंतिम चरण प्रदक्षिणा और भगवान को नमस्कार करने का होता है। भक्त आराध्य के चरणों में पुष्प अर्पित करते हैं। पुष्पों का अर्पण भगवान के श्री चरणों में स्वयं को समर्पित करने तथा एक और दिन का जीवन देने के लिए धन्यवाद देने का प्रतीक होता है। यह व्यक्ति के भीतर एक और दिन आंतरिक आनंद के साथ जीने का उत्साह भी पैदा करता है।

इसलिए जो लोग अपने दिन की शुरुआत विधिवत पूजा करने के साथ करते हैं, वे अगर अपनी पूजा विधि के विभिन्न चरणों का उद्देश्य समझें और उसी भावना के अनुरूप अपनी अर्चना संपन्न करें तो उनको सचमुच उसका लाभ होगा। उनका मन संयत तथा प्रसन्न रहेगा और दिन शुभ होगा।

संस्कार का महत्व

दिलीप भाटिया

ईमानदारी, निर्लोभ, सादगी, सत्यता, परोपकार, सहायता, सेवा, सम्मान, सदाचार ये शब्द मात्र शब्द कोष में ही क्यों रह गए हैं? संस्कार, संस्कृति, नैतिकता, जीवन मूल्य कहां खो गए? बच्चा गर्दन हिलाता है, स्माइल देता है, पर हाथ नहीं जोड़ता, पैर नहीं छूता, प्रणाम नहीं करता, 'आशीर्वाद' क्या है, उसे नहीं पता?

दीपावली में लक्ष्मी पूजन के पश्चात, होली की शाम को, जन्मदिन पर तिलक के पश्चात् अम्मा-बाबूजी के पैर छूते थे, झोली भरकर आशीर्वाद मिलता था। आज केक काटने के बाद तालियां बजती हैं, हाथ मिलाए जाते हैं, पर सिर पर आशीर्वाद का हाथ नहीं रखा जाता। जीवन की दौड़ में, सब कुछ पाने की होड़ में शायद कुछ पाया है, फाइलों में डिग्री, कार्यालय में पोस्ट पद, लेपटॉप, मोबाइल, गहने, शेयर, लॉकर, बॉन्ड, फ्लैट, पर बहुत कुछ खोया है, आरती, प्रसाद, जन्मदिन पर मिला पांच रुपए का नोट, दादी की मिश्री, नानी के लड्डू, मौसी की साड़ी, वगैरह-वगैरह सब छिन सा गया है।

20-30-40 वर्ष पहले साहित्यकार को पत्र लिखते थे, पोस्टकार्ड पर आशीर्वाद मिलता था, आज 500-1000 रुपया सहयोग राशि देकर खरीदा हुआ सम्मान, प्रशस्ति पत्र, शाल वाला फोटो मात्र फेसबुक पर डालने के लिए है। गिलास आधा खाली है, पर सुबह का भूला शाम को घर लौट आए तो उसे भूला हुआ नहीं कहते, नई पीढ़ी को संस्कारित करना कर्तव्य है, आवश्यकता है, स्कूल की प्रार्थना में नैतिकता व संस्कार शिक्षा के लिए पांच मिनिट जोड़े जा सकते हैं। बर्थ-डे पर एक टीका किया जा सकता है। मन्दिर का प्रसाद गांव के स्कूल के निर्धन बच्चों में वितरित किया जा सकता है, गर्मी की छुट्टी में हिल स्टेशन जाने की अपेक्षा गांव के बाबूजी का मोतियाबिन्द का ऑपरेशन करवाया जा सकता है, गर्मी में प्याऊं पर चार मटके दिए जा सकते हैं, जींस टाप वाली बहू की अपेक्षा सिर पर साड़ी का आंचल निश्चय ही नई पीढ़ी को संस्कार का पाठ स्वत: ही पढ़ा देगा।

संकल्प करें कि संस्कार के गिलास को पूरा ही नहीं भरेंगे, छलकाऐंगे भी, उच्छृंखलता, अनुशासन हीनता के अंधेरे में सुसंस्कार का एक दीप जलाऐंगे, सकारात्मक दृष्टिकोण हो तो जीवन चाहे सफल नहीं हो, सार्थक अवश्य ही होगा।

-372/201, न्यूमार्केट, रावतभाटा-323307

स्वास्थ्य

मंजुला जैन

स्वस्थ रहने के रहस्य

हर व्यक्ति सुखी होना चाहता है। इसके लिये जरूरी है निरोगी होना। आप अपनी दैनिक जीवनचर्या में कुछ प्राकृतिक नियमों को अपनाकर निरोगी रह सकते हैं। यहां ऐसे ही मूलभूत रहस्यों की चर्चा कर रही हूँ, जिसे आप अपनाकर स्वस्थ रह सकते हैं।

हवा: हमारा शरीर भोजन को जलाने से ऊर्जा निर्मित करता है। इसके लिए ताजी हवा की जरूरत है। ऐसी हवा जिसमें ऑक्सीजन अधिक है- घर की हवा नहीं, जिसमें सौ बार सांस ली जाए। घर से बाहर ऐसी जगह निकलिए जहां की हवा ताजी है, वहां आप कई बार गहरी सांस लीजिए। जितनी बार हो सके, आप यह काम बारम्बार कीजिए। इससे आपका दिमाग साफ रहेगा और आपकी हड्डियों में जान आ जायेगी। आपका शरीर आपका घर है और उस घर में ताजी हवा आने दीजिए। इससे आपको बढ़िया एवं सुखद आनंद की अनुभूति का अहसास होगा। अगले भोर को आप अधिक ताजगी महसूस करेंगे।

पानी: हमारा शरीर अधिकतर पानी से भरा हुआ है। प्रत्येक दिन 6 से 8 गलास पानी पीजिए। पानी पीने के लिए चाय की प्याली की गिनती नहीं की जाती। फल रस की भी गिनती नहीं की जाती। शरीर में करोड़ों कोशिकायें हैं जिन्हें अपने कार्य भलीभांति करने देने के लिए आपको सहायता करनी है। इसके सिवाय गुर्दों और पसीना निकलने की ग्रंथियों की सहायता करनी है कि वे अवशेष अच्छी तरह बाहर निकालें। अपनी त्वचा के रोमकूपों को खुला रखने के लिए आपको इन्हें पानी से धोना चाहिए। रात को अच्छी नींद आने के लिए गुनगुने पानी से नहाकर और सुबह ठण्डे पानी का स्नान कीजिए जिससे कि आप फुर्तीले रहें। यहां यह स्मरणीय है कि ठण्डे पानी से स्नान करना चाय कॉफी पीने से बेहतर है।

व्यायाम: हमारे शरीर में जिन मांसपेशियों का व्यवहार नहीं होता, वे यूं ही खराब हो जाती हैं। व्यायाम मांसपेशियों को शक्ति देता है। व्यायाम करने से लम्बी सांस ली जाती है और इससे रक्त के संचालन कार्य में स्फूर्ति आती है।

सूर्य ताप: मनोबल बढ़ाने के लिए सूर्य प्रकाश बढ़िया है। इसके द्वारा शरीर विटामिन 'डी' बनाता है और कैल्शियम का उचित व्यवहार करता है। जब आप खिड़कियों के पर्दे हटाकर सूर्यप्रकाश आने देते हैं तो घर के अन्दर के रोग फैलानेवाले कीटाणु मर जाते हैं।

विश्राम: याद करें जो मोटरगाड़ी बहुत तेजी से बहुत देर तक चलाई जाती है वह जल्दी खराब होती है। मनुष्य के शरीर की भी यही हालत है। वैज्ञानिक सर्वेक्षण दर्शाते हैं कि जो लोग प्रत्येक रात को सात से आठ घंटे सोते हैं वे अधिक दिनों तक जिन्दे रहते हैं। सप्ताह में एक दिन विश्राम लेना शरीर के लिए बहुत अच्छा है।

भोजन: बहुत सारे ऐसे लोग हैं जो अपने दांतों से अपनी कब्र खोदते हैं। अपना भोजन बिल्कुल सरल रखिये। फल, अन्न, काष्ठ फल और सब्जियां आपके लिए सर्वोत्तम भोजन हैं। पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन पाने के बारे में चिंता मत कीजिए। बस, इतना कीजिए कि दालें और अनाज (चावल, गेहूं आदि) प्रतिदिन खाते हैं और आपको आवश्यकतानुसार पूरा प्रोटीन मिल जायेगा। वसा (चर्बी, तेल) और शक्कर अधिक मत खाइए। मांसाहार की आवश्यकता नहीं है।

संयम: यदि लोग संयमी रहते तो बहुत अधिक एम्बुलेंस गाड़ियों की जरूरत नहीं पड़ती। चाय, काफी, तेज मसाले-ये सब शरीर के लिए ठीक नहीं है। तम्बाकू और अल्कोहल यानी तरह-तरह की शराबें सही रूप में विष हैं। ये न केवल स्वास्थ्य के लिए अनुचित हैं अपितु जीवन के लिए भी ठीक नहीं हैं। यदि आप इन सबका व्यवहार करते हों तो इनसे फौरन छुटकारा पाने के लिए मदद मांगिए, वरना आपके संतप्त पारिवारिक सदस्यों को आपका डॉक्टरी खर्च वहन करना पड़ेगा।

ईश्वर पर भरोसा: अधिकांशत देखने में यह आया है कि सभी रोगों के नब्बे प्रतिशत कारण किसी-न-किसी कारण से मनोवैज्ञानिक हैं। इसका मतलब है कि लोग जिस प्रकार विचार करते हैं उससे रोग का आरंभ होता है या रोग अधिक गंभीर होता है। यह नीचे जाने का रास्ता है। दु:ख वाले विचारों से बीमारी होती है। बहुत से रोगी आशा नहीं छोड़ने के कारण चंगाई पाते हैं और डॉक्टर इसे देखकर चकित हो जाते हैं। स्वास्थ्य की रक्षा के लिए ईश्वर की भलाइयों पर विश्वास रखना अद्भूत बात है।

संक्षिप्त में निरोगी रहने के लिये आप निम्न जापानी जीवनशैली अपनाएं-

- खुली और हवादार जगह में यथासंभव अधिक समय व्यतीत करें।
- संध्या के बाद शीघ्र ही शय्या ग्रहण करिये और प्रात: जल्दी उठिए।
- कम-से-कम छह घंटे और अधिक-से-अधिक साढ़े सात घंटे सोइए। रात्रि को कमरें में रोशनी न हो, किन्तु खिड़की खुल रहे।
- चाय और कहवा न पियें, मद्य और धूम्रपान बिल्कुल त्याग दें।
- दिन में दो बार भोजन करें।
- ताजे पानी से प्रतिदिन स्नान करें।
- मोटे वस्त्र पहनें।
- सप्ताह में एक दिन छुट्टी अवश्य मनाइए। उस दिन कुछ भी न पढ़ें, न लिखें।
- काम-क्रोध की उत्तेजना से सदा बचिए। मस्तिष्क का कार्य अधिक न करें।

लक्ष्मीनारायण मित्तल

ब्रह्मचर्य के अपने जिन उदाहरणों को गांधीजी ने प्रयोग कहा था, वे वास्तव में यज्ञ थे। गांधीजी पर गीता का गहरा प्रभाव था, इसी से वे अनासक्त थे।

ब्रह्मचर्य शारीरिक संबंधों का निषेध मात्र नहीं

प्रत्येक जीव ईश्वर का अवतार है। परन्तु लौकिक भाषा में हम सबको अवतार नहीं कहते। जो सभी पुरुषों में सबसे श्रेष्ठ धर्मवान है, उसे ही भावी सभ्यता अवतार के रूप में पूजती है। गांधीजी के यज्ञ उनके लिए मानव की अंतिम सद्-अभिलाषा के सूचक हैं। यही उनका आत्मदर्शन था।

भारतीय मध्यवर्गीय समाज ने अपनी जीवन व्यवस्था के लिए जिन मूल्यों को आदर्श माना है, उन पर गांधीजी का आकलन नहीं किया जा सकता। इसीलिए उनके कुछ प्रयोग साधारण जन को अटपटे लगते हैं। यह बात केवल आज के संदर्भ में ही नहीं है, बल्कि गांधीजी के जीवनकाल में भी उनके प्रयोगों को लेकर उनके नजदीकियों में काफी रोष, खेद या अप्रसन्नता थी। हरिजन पत्रिका के दो सहायक संपादकों ने अपना पद छोड़ दिया था। उनके स्टेनोग्राफर परशुराम ने भी उनका साथ छोड़ दिया था। सरदार पटेल काफी खफा थे, विनोबाजी भी अनमने थे, गांधीजी के तर्जुमाकार सचिव ने भी त्यागपत्र दे दिया था। गांधीजी के जीवनकाल में ही अक्टूबर 1939 में मुम्बई के एक पत्र ने रहस्योद्घाटन की तर्ज पर गांधीजी के वैयक्तिक जीवन का खुलासा किया था। कुछ अमेरिकी पत्रिकाओं ने भी इसी तर्ज पर मैडलीन स्लेड के साथ लंदन में 1931 में गांधीजी के संपर्कों पर छींटाकशी की थी। अनेक हिन्दू कट्टरवादियों ने गांधीजी के प्रयोगों को अधर्म का नाम दिया था। पर गांधीजी कोई साधारण पुरुष न थे। उन्हें हम अपने प्रचलित मूल्यों से माप भी नहीं सकते। पर आश्चर्यजनक रूप से उस समय का साधारण अनपढ़ भारतीय यह समझता था कि गांधीजी न संन्यासी हैं, न संसारी। टैगोर ने उन्हें महात्मा की उपाधि दी थी।

गांधीजी क्या थे, शायद यह बतलाना कठिन होगा, पर वे क्या नहीं थे, शायद यह बतलाना उतना कठिन नहीं होगा–वे ऋषि मुनि अवतार न थे। वे बापू थे। बापू- सामान्य भाषा में हम भारतीय उसे मानते हैं जिसे बड़े संयुक्त कुटुम्बों में आपसी रिश्तों पर नैतिक सलाह देने की सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है। महात्मा शब्द तो हिन्दू धर्म शास्त्रों में कहीं परिभाषित ही नहीं हुआ है।

गांधीजी ने फ्रायड को नहीं पढ़ा था। ऐसा खुद गांधीजी ने कहा है। परन्तु उन्होंने भारतीय दर्शन में अद्वैत, प्राचीन तंत्रविद्या और गीता का विशद अध्ययन किया था। अद्वैत दर्शन के अनुसार आत्मा न स्त्री है, न पुरुष। यह भेद माया से जनित है। तंत्र विद्या में पुरुष और प्रकृति का भेद माना गया है, परन्तु उसका संसर्ग काम रहित है। अतः एक स्तर पर स्त्री-पुरुष भेद है। दूसरे स्तर पर यह भेद निरस्त हो जाता है, क्योंकि संयोग प्रतिज्ञा से बंधा हुआ नहीं है, बल्कि विरक्त है।

गांधीजी जड़ता के विरोध में शक्ति को देखते हैं। सही दिशा में लगी कर्मठता ही शक्ति है। गांधीजी के विश्लेषण में ब्रह्म और आत्मा एक है। आत्मा ब्रह्म का अंश नहीं है, पूर्ण ब्रह्म है। हां, कुछ भौतिक कारणों से आत्मा वह सब नहीं कर सकती जो आत्मा का गुण है। परन्तु पतंजलि के योग सूत्र में बताए रास्ते से आध्यात्मिक अभ्यास से उसे पाया जा सकता है। आध्यात्मिक स्वतंत्रता के लिए पतंजलि ने जिन पांच सूत्रों की बात की है- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह- उस सूची में गांधीजी ने चार सूत्र और जोड़े- अस्पृश्यता निवारण, अस्वाद, अभय और सर्वधर्म समभाव। गांधीजी के लिए परम्परा में तैरना तो ठीक है, डूबना ठीक नहीं है। इसी के अनुसार हिन्दू धर्मशास्त्रों की परम्पराओं का गांधीजी ने अपने अनुरूप विश्लेषण किया है। गांधीजी का मानना था कि उनके प्रयोग मोक्ष प्राप्ति के आंतरिक अंश हैं। ब्रह्मचर्य के उनके प्रयोग यह सिद्ध करने के लिए थे कि ब्रह्मचर्य मात्र शारीरिक संबंधों का निषेध मात्र नहीं है, अपितु वह लिंगातीत भाव का निश्रय है, जहां स्त्री-पुरुष भेद ही नहीं रहता। उनका मानना था कि वे आध्यात्मिक वैज्ञानिक के रूप में ब्रह्मचर्य पर मात्र नया शास्त्र गढ़ने में नहीं लगे हैं, बल्कि ऐसे दोषों को स्वयं दूर करना चाहते थे, जिसके कारण वे अपने को अपूर्ण मानते थे और नेतृत्व देने में अपने को स्वर्था समर्थ नहीं समझते थे। ■

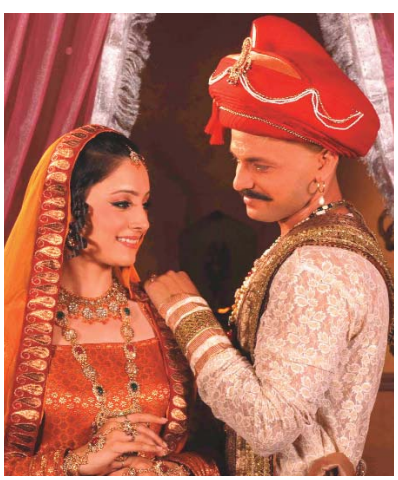

सच्चा बहादुर

बाजीराव पेशवा की मराठी-सेना ने निजाम की फौज को चारों ओर से घेर लिया। निजाम की फौज के लिए रसद और हथियार मिलने के रास्ते बंद हो गए। इन्हीं दिनों मोहर्रम का त्यौहार आ गया। मराठी सेना से घिरे निजाम के शिविर में फौजियों के भूखों मरने की नौबत आ गई। विवश होकर निजाम ने पेशवा को पत्र लिखा- क्या हमारे सिपाहियों को त्यौहार के दिनों में भी भूखों मरना पड़ेगा? हमने तो सुना कि पेशवा बहादुर होने के साथ ही रहमदिल भी होते हैं। वे भूखे दुश्मन पर हमला नहीं करते हैं।

पेशवा ने निजाम का पत्र अपने अष्टप्रधानों के सामने रखा। वे सभी एक स्वर में बोले, निजाम पर दया करना ठीक नहीं है। किन्तु पेशवा ने कहा-मरहठे वीर हैं, पर साथ ही इंसान भी। वीरता का यह तकाजा है कि शत्रु को अवश्य पराजित किया जाए, पर इंसानियत की यह उम्मीद है कि भूखे को भोजन दिया जाए भले ही वह आपका शत्रु ही क्यों न हो। पेशवा की आज्ञा से निजाम के पास रसद की गाड़ियां भेज दी गईं। बड़े ठाठ से मोहर्रम मनाया गया। निजाम ने तारीफ करते हुए कहा–सच्चा बहादुर वही है जो अपने शत्रु के साथ भी इंसानियत का व्यवहार करता हो।

-ज्ञानचंद जैन, नई दिल्ली

सत्संग

आचार्य विजय नित्यानंद सूरि

स्तुति से लाभ किसको ?

भगवान महावीर से गौतम स्वामी ने जब पूछा–भन्ते! थव-थुई मंगलेणं जीवे किं जण्यइ? हे भन्ते, अरिहंत, सिद्ध, साधु आदि गुणी पुरुषों के गुणों का उत्कीर्तन, उनके गुणों की स्तुति-स्तवना करने से जीव को क्या लाभ होता है? तो भगवान फरमाते हैं–गौतम! स्तव-स्तुति मंगल का असीम अचिन्त्य लाभ है। गुणी पुरुषों का गुण-गान करने से आत्मा में उनके ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप उत्तम गुणों का प्रकाश झलकता है। बार-बार उन गुणों का स्मरण-स्तवन करने से आत्मा ज्ञान-दर्शन-चारित्र बोधि को प्राप्त करता है और उत्कृष्ट भाव रसायन आने पर वह इसी भव से अंतक्रिया करने में समर्थ होता है। अर्थात् उसी भव में अपने समस्त कर्मों का क्षय करके परम निर्वाण पद को प्राप्त कर सकता है। यदि किसी कारण संपूर्ण कर्म क्षय नहीं कर पावे तो उच्च देवलोक में वैमानिक देव बनता है।

इससे यह बात बहुत स्पष्ट हो जाती है कि गुणी बनने के लिए गुणों का आदर करने की वृत्ति होनी चाहिए। गुणों का सन्मान-सत्कार और सच्चे मन से उनकी प्रशंसा करने से धीरे-धीरे वे ही गुण हमारे जीवन में प्रतिबिम्बित हो उठते हैं।

हमारे जितने भी स्तवन, स्तोत्र हैं, चाहे भक्तामर है, चाहे कल्याण मंदिर या जय वीयराग आदि, सभी गुणी पुरुषों की स्तुति के माध्यम हैं। यदि आप सोचते हैं कि इन स्तुतियों से वीतराग परमात्मा हम पर प्रसन्न होंगे, वे हम पर कृपा करेंगे तो यह आपका बहुत बड़ा भ्रम है, भ्रांति है, अज्ञान है। ये स्तुतियां, स्तोत्र, भगवान को प्रसन्न करने के लिए नहीं हैं, अपितु, भगवान के दिव्य गुणों का स्मरण करने के लिए हैं, ताकि उन गुणों का बीज हमारी मनोभूमि में भी अंकुरित हों और हम उन गुणों के पात्र बन सकें। वे गुण हमारे जीवन में झलक सकें, हमारी आत्मा में वे गुण प्रकट हो सकें। दूसरों के गुणों को खींचने के लिए ही हम उनके गुणों का स्मरण करते हैं।

प्रकृति का नियम है, फूलों को देखोगे तो मन में प्रसन्नता जगेगी, यदि गंदगी को देखोगे तो घृणा उत्पन्न होगी।

गुणी जनों को, सदाचारियों को, दानी, त्यागी, तपस्वी, ज्ञानी और वैरागीजनों को देखोगे तो आपके मन में भी एक लहर उठेगी। मैं भी ऐसा बनूं। यह एक प्राकृतिक नियम है कि मनुष्य जैसा देखता है, जैसा विचारता है, जैसी संगति में रहता है, वैसा बनने का संकल्प स्वयं उठता है। घर में किसी को तप करते देखकर छोटे-छोटे बच्चों में भी उपवास करने की होड़ लग जाती है। दान की बोली लगती देखकर कंजूस सेठ भी कभी-कभी अपना खजाना लुटा देता है। रामायण देख-सुनकर यदि राम के उदार चरित्र पर चिंतन करोगे तो आपके मन में भी भाई-भाई का प्रेम, पिता के प्रति सन्मान, न्याय के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा उठेगी। रावण के चरित्र पर ध्यान दोगे, उस पर चिंतन करोगे तो अहंकार दीप्त होगा, अपनी जिद्द पर मर मिटने का झूठा दंभ पैदा होगा। महाभारत देखकर दुर्योधन के चरित्र पर चिंतन करने वाले के भीतर दुर्योधन की छवि उभरने लगती है तो धर्मराज के चरित्र का विचार करने वाला उसी का अनुसरण करने को उत्सुक होता है। एक गांव के चौधरी ने पंडितजी से महाभारत की कथा करने को कहा। पण्डितजी ने सप्ताह बैठाया और खूब ऊंची सुरीली आवाज में सबको महाभारत सुनायी। महाभारत की कथा पूरी हुई तो पंडितजी ने दक्षिणा मांगने का विचार कर पहले चौधरी से पूछा, क्यों चौधरी, महाभारत की कथा कैसी लगी?

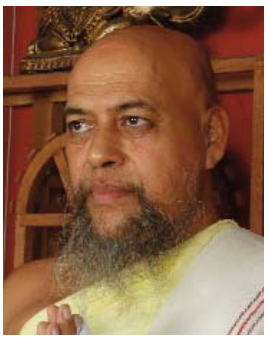

चौधरी बोला–अरे महाराज, आप पहले कहां चले गये थे, बहुत देर हो गई महाभारत सुनने में। यदि पहले आपकी कथा सुन लेता तो मैं भी अपने भाइयों को सौ बीघा में से एक बीघा टुकड़ा भी नहीं देता। हम भी पांच भाई थे। पिताजी सौ बीघा खेती छोड़ गये। मैंने 20-20 बीघा बांट दी। अब क्या हो सकता है, यदि पहले दुर्योधन की कहानी सुना देते तो मैं भी कह देता चलो, आ जाओ मैदान में लड़ेंगे, अपनी-अपनी ताकत दिखा दो, एक बीघा टुकड़ा भी किसी को नहीं देता।

पंडितजी ने माथा पीट लिया, अरे, महाभारत में क्या यही एक बात पसंद आई है? पांचों पाण्डवों का प्यार, धर्मराज की नीतिमत्ता, उदारता, भीम की आज्ञापालनता, अर्जुन की श्रीकृष्णभक्ति, सब कुछ छोड़कर इसे दुर्योधन का चरित्र ही अच्छा लगा? ऐसे आदमी से दान दक्षिणा की क्या आशा करूं? पंडितजी ने अपनी पोथी पत्रा बांधे और नमस्ते की।

तो यह एक दृष्टि है और अधिकतर मनुष्यों में ऐसी ही दृष्टि होती है, वे बुराई को ही ग्रहण करते हैं, लेकिन इससे मनुष्य का पतन होता है। मनुष्य पशु और राक्षस बन जाता है। उसमें देवत्व प्रकट नहीं हो सकता। देवत्व और दिव्यत्व प्राप्त करने के लिए तो स्वभाव को बदलना होगा, दृष्टि को बदलना होगा और गुणों से प्रेम करने की भावना पैदा करनी होगी। गुणीजनों के प्रति आदर भाव जगाना होगा। गुणियों का चरित्र सुनना होगा। उसके प्रति अहोभाव जगना चाहिए कि मैं भी ऐसी ही गुणी बनूं। ■

के. जी. शारदा

आशापूर्ण विचारों में विलक्षण शक्ति विद्यमान रहती है। आप इसका सहारा लेकर तो देखें, जरा अनुभव करके तो देखें, वह हमें कितना बल देती है। आप यह विचार पक्का कर लीजिए कि हमारी आशा पूर्ण होगी। हमारे मनोरथ सिद्ध होंगे।

असंभव को संभव बनाने का द्वार

आशा–इन दो अक्षरों के सहारे सारी दुनिया टिकी है। विश्व के महान व्यक्ति, महान काम– ये सब किसी-न-किसी आशा और उम्मीद के सहारे शुरू होते हैं और पूरे होते हैं। हमारे आस-पास जितने व्यक्ति काम कर रहे हैं, मेहनत मजदूरी करके जीवन संग्राम के मोर्चों पर डटे हैं, उनमें आशा की ही शक्ति है जो उन्हें ऊर्जावान बनाए रखती है। संसार में अनेक व्यक्ति सिर्फ अपने उम्मीदों के सहारे अनेक ऐसे-ऐसे काम कर गए, जिसे देखकर लोग दांतों तले उंगली दबा लेते हैं। महान सिकन्दर विश्व विजय के अपने अभियान पर निकला। किसी ने पूछा, इतना बड़ा अभियान किसके सहारे शुरू कर रहे हो? उसने कहा, अपनी आशाओं के सहारे, क्योंकि वे अंतिम क्षण तक मेरे साथ होंगी।

नेपोलियन के जीवन का रहस्य भी यही था– विपरीत परिस्थिति में भी साहस न छोड़ा जाए। उसने कहा, असंभव शब्द कायरों के शब्दकोश में होता है। उसे अपनी आशा की शक्ति पर विश्वास था। महाराणा प्रताप की आशा का तार कभी नहीं टूटा। उसी की वजह से वे जंगल में रह कर भी अपनी लड़ाई जारी रख सके। जॉन ऑफ आर्क को अपनी प्रेरणा इसी आशा से मिलती थी कि– तुम सब कुछ खो दो, पर आशा का साथ मत छोड़ो। आशा तुम्हें सब कुछ देगी– सुख, समृद्धि और सफलता। मनुष्य के जीवन में आशा का बड़ा सहारा होता है। हम उम्मीद के सहारे क्या नहीं कर सकते। जिसकी हम चाह करते हैं, हमारी आत्मा की आवाज जो कहती है, वह व्यर्थ नहीं होती। हम जिसकी आशा रखते हैं, वह एक न एक दिन अवश्य प्राप्त होता है। समृद्धि, विनय और सफलता के विचार सबसे पहले मन से ही उत्पन्न होते हैं।

आशापूर्ण विचारों में विलक्षण शक्ति विद्यमान रहती है। आप इसका सहारा लेकर तो देखें, जरा अनुभव करके तो देखें, वह हमें कितना बल देती है। आप यह विचार पक्का कर लीजिए कि हमारी आशा पूर्ण होगी। हमारे मनोरथ सिद्ध होंगे। सपने साकार होंगे। ईश्वर के सामने हमारी सुनवाई अवश्य होगी। हमारी प्रार्थना या पुकार निष्फल नहीं जाएगी।

आशा करने के साथ इच्छित लक्ष्य की ओर हम आकर्षित होने लगते हैं। हमारी सारी शक्ति उसी पर आकर टिकती है। जब हम मन, वाणी और कर्म से उसकी प्राप्ति का प्रयास करते हैं, तभी से हमारा संबंध उससे जुड़ने लगता है। खिंचाव उतना ही तेज होगा, जितनी मजबूत हमारी आशा होगी। इसलिए आशापूर्ण मन संसार में सफलता प्राप्त करने की पहली सीढ़ी है। इसके साथ सचाई, परिश्रम, विश्वास और धैर्य भी हो तो सोने पर सुहागा। अगर केवल आशा ही करते रहें, उसे प्राप्त करने के लिए कोई प्रयत्न नहीं करें, कोई परिश्रम नहीं करें, तो वह पानी के बुलबुले के समान क्षणभंगुर साबित होगा। आशा और लालसा में फर्क है। लालसा वह इच्छा है जो श्रम नहीं करना चाहती, सिर्फ फल खाना चाहती है। आशा हमें लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उद्यम करने की प्रेरणा देती है। हम ऐसे कितने ही नवयुवकों और नवयुवतियों को जानते हैं, जिनमें से कोई डॉक्टर, जज, इंजीनियर, चार्टर्ड अकाउंटेंट, प्रोफेसर, उद्योगपति या बड़ा अधिकारी बनना चाहता था। उनकी इच्छाशक्ति इतनी कमजोर थी कि दो-चार कठिन परिस्थितियों और झटकों ने ही उन्हें अपने उद्देश्य से हटा दिया। वे फिसल गए, हिम्मत हार कर गिरे और दूसरे बार उठने का प्रयास ही नहीं किया।

लोग खयाली पुलाव तो पकाते हैं, परन्तु फल प्राप्ति के लिए पर्याप्त परिश्रम नहीं करते। उद्देश्य की प्राप्ति तभी होती है, जब अभिलाषा और निश्चय दोनों जुटकर काम करें। पूरे मनोयोग से अपना कार्य हम तभी कर सकेंगे, जब हमें अपनी शक्तियों तथा अपने आदर्शों में पूर्ण विश्वास होगा।

बहुत से ऐसे अवसर भी आते हैं जब मन टूटने लगता है, शक्तियां शिथिल होने लगती हैं। किसी तूफान में सब कुछ तहस-नहस होता-सा नजर आता है। ऐसा लगता है कि सब कुछ बस डूबने वाला ही है। ऐसी विकट स्थितियों में हमारी आशा बनी रहे। अगर हमने वह समय भी आशाओं के साथ गुजारा तो अंत में निश्चित ही सुख, समृद्धि और सफलता प्राप्त होगी। ■

फार्म-8

(नियम 8 देखिए)

1. नाम	:	समृद्ध सुखी परिवार
2. प्रकाशन-स्थान	:	दिल्ली
3. प्रकाशन-अवधि	:	मासिक
4. मुद्रक का नाम	:	ललित गर्ग
क्या भारत के नागरिक हैं?	:	हां
यदि विदेशी हैं तो मूल देश का नाम	:	नहीं
पता	:	ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट 25 आई. पी. एस्सटेंशन, पटपड़गंज दिल्ली-110092
5. प्रकाशक का नाम	:	ललित गर्ग
क्या भारत के नागरिक हैं?	:	हां
यदि विदेशी हैं तो मूल देश का नाम	:	नहीं
पता	:	ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट 25 आई. पी. एस्सटेंशन, पटपड़गंज दिल्ली-110092
6. संपादक का नाम	:	ललित गर्ग
क्या भारत के नागरिक हैं?	:	हां
यदि विदेशी हैं तो मूल देश का नाम	:	नहीं
पता	:	ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट 25 आई. पी. एस्सटेंशन, पटपड़गंज दिल्ली-110092
7. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी हों या जिनका हिस्सा हो	:	नहीं

मैं ललित गर्ग एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

01-03-2012

ललित गर्ग

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

शब्द की महिमा, ईश्वर की शक्ति

ज्ञानी संत सिंह मस्कीन

मनुष्य के जीवन की सारी हलचल शब्द के इर्द-गिर्द सिमटी हुई है। मानव जीवन का समूचा विकास बोल यानी शब्द के सहारे हुआ है। स्कूल, कॉलेज इत्यादि सभी संस्थान शब्द के ही सहारे चलते हैं। वह शब्द जो अक्षरों से मिलकर बना है। इन्हीं अक्षरों के महत्व का बखान करते हुए गुरुनानक देव फरमाते हैं- अखरी ज्ञान गीत गुण गाए। भावार्थ यही है कि सारा विकास अक्षर यानी शब्द पर खड़ा है।

गूंगे की दुनिया में शब्द नहीं है, इसलिए उसका विकास रुका रहता है। शायद यही कारण है कि कोई गूंगा साहित्यकार, चिंतक या दार्शनिक नहीं मिलेगा। लेकिन दूसरी और नेत्रहीन के लिए ज्ञान के द्वार बंद नहीं होते। दुनिया में कितने ही नेत्रहीन कवि, दार्शनिक, चिंतक और संगीतकार हुए हैं। नेत्रहीन बहुत बड़े राजनीतिज्ञ भी हुए हैं। द्वापर युग में धृतराष्ट्र नेत्रहीन थे, पर उन्होंने राजकाज चलाया। इंग्लैंड में तो एक नेत्रहीन शिक्षा मंत्री तक रहा है। एक नेत्रहीन संत भी हो सकता है। इसकी सबसे बड़ी मिसाल हैं भक्त सूरदास। वे नेत्रहीन थे। वे संसार को देखने में तो समर्थ नहीं थे, लेकिन मन की आंखों से निरंकार को देखने में सफल हुए।

गुरुनानक के मुख से पहला अक्षर निकला था 'इक'। गुरु ग्रंथ साहिब का आद्याक्षर भी इक है- इक ओंकार। इससे आगे सारे गुरु ग्रंथ साहब की वाणी उसी 'इक' यानी एक की व्याख्या और खुलासा करती है। धर्म की साधना भी यही है, यानी ब्रह्माण्ड की अनेकता में उस एक को देखना। लहरें अनेक हैं, पर सागर एक हैं। किरणें अनेक हैं, पर सूरज एक है। संसार में विभिन्नता है।

सभी जीव एक दूसरे से भिन्न है जैसा कि गुरुवाणी प्रमाण देती है- मेरे करते इक खेल बणाइआ, कोई न किसे जिहा उपाइआ। हर व्यक्ति के फिंगरप्रिंट, आवाज, रूप आदि एक दूसरे से भिन्न होते हैं। विद्वान तो यहां तक कहते हैं कि सागर की लहरें भी एक जैसी नहीं होतीं। एक फूल जैसा दूसरा फूल या एक फल जैसा दूसरा फल नहीं होता। दोनों में कोई न कोई भेद होता है। यह बात अलग है कि वह भेद इतना सूक्ष्म होता है कि हमारे देखने में नहीं आता। परमात्मा की दुनिया में पुनरुक्ति नहीं है। इस ब्रह्माण्ड में कई कोटि सूरज हैं, लेकिन एक सूरज जैसा दूसरा सूरज नहीं है। इसी तरह चांद-तारे भी असंख्य हैं, लेकिन सभी एक दूसरे से भिन्न। इन ब्रह्माण्ड की एकता का आधार वह एक परमात्मा है। उसका स्वभाव, उसका गुण क्या है? परमात्मा एक शक्ति है, व्यक्ति नहीं। अगर उसे हमने व्यक्ति माना, तो उसका न केवल जन्म मानना पड़ेगा, बल्कि मरण भी स्वीकार करना पड़ेगा। लेकिन ईश्वर तो जन्म और मरण में नहीं आता। जप साहिब में ईश्वर के इस गुण के बारे में गुरु गोविंद सिंह का कथन है- अजन्म हैं अमरण हैं। अगर उसे व्यक्ति मानें तो उसके मां-बाप और भाई-बहन भी मानने पड़ेंगे। इसका खुलासा भी गुरु महाराज आगे करते हैं- न तात हैं, न मात हैं, न जात हैं, न पात हैं। व्यक्ति मानें तो उसका रूप रंग भी मानना पड़ेगा।

भारतीय चिंतन में उस शक्ति के तीन रूप माने गये हैं- सत्यम् शिवम् सुन्दरम्। यह सारा आकार उससे आता है, जिसका कोई आकार नहीं। यह सारा रूप उससे आता है जिसका कोई रूप, रंग नहीं। फूल खिला रूप और रंग लेकर। फूल मुरझाया तो रंग खो गया? समा गया उसमें, जिसका कोई रूप नहीं। एक दिन फूल सूखकर नष्ट हो गया। उसका आकार वहां चला गया, जिसका कोई आकार नहीं। सुकरात सांझ के समय घर लौट रहे थे। एक बच्चा घर में रोशनी के लिए चिराग लिए जा रहा था। उन दिनों यूनान में आग सिर्फ अमीरों के यहां जलती थी, जहां से दूसरे लोग भी अपने घर में रोशनी के लिए चिराग या मशाल जलाकर ले आते थे। सुकरात ने बच्चे को रोक कर सवाल किया- 'यह प्रकाश कहां से आया?' उनके पूछने का आशय यह था कि प्रकाश किस घर से लेकर आए हो। बालक ने फूंक मार कर चिराग बुझा दिया और बोला-'बाबा बताओ, यह प्रकाश कहां चला गया?' बुर्जुग सुकरात ने बच्चे के आगे सिर झुका दिया।

बह गए कोटि कबीर

लक्ष्मी रानी लाल

इन दिनों सभी मुक्ति की बात करते हैं। अथाह दु:ख में हों या अपार सुख में, मनुष्य का तनावग्रस्त होना स्वाभाविक है। सभी इससे अंत में त्राण पाना चाहते हैं, साथ ही जन्म-मरण के बंधन को तोड़ मुक्ति की ही कामना करते हैं, लेकिन यह भी अकाट्य सत्य है कि भगवत प्रेम के प्राप्त होते ही दु:ख भी परम सुख हो जाता है और सिद्ध पुरुष जिस जन्म-मरण को परम दु:ख बतलाते हैं वह भी सुख का भंडार बन जाता है। यही कारण है कि निषाद राज को भगवान श्रीराम कहते हैं-

सखा परम परमारथ ए हूं। मन क्रम वचन राम पग ने हू॥

परमार्थ है- जन्म-मरण से मुक्ति, परन्तु परम परमार्थ है- भगवत प्रेम, जहां जन्म-मरण भी मुक्ति की अपेक्षा विलक्षण सुख-प्रद हो जाते हैं। संत तुकाराम कहते हैं-

'मुक्ति के सुख को मैं लात मारता हूं। हे प्रभु! मुझे बारंबार गर्भ में डालो, जिससे मैं आपके पवित्र प्रेम का नित्य नया आनंद ले सकूं, सत्संग का विलक्षण सुख-भोग सकूं। आपकी पवित्र मंगलमयी भक्ति का सतत् विस्तार कर सकूं।' नरसिंह मेहता भी यही कहते हैं- 'हरि का भक्त मुक्ति नहीं मांगता। वह तो मांगता है प्रभु की सेवा के लिए जन्म-जन्म नित्य नूतन अवतार- अरे, भक्ति का सुख भोगने के लिए प्रभु भी अवतार धारण करते हैं।' श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु स्वयं साक्षात् सच्चिदानंदन परब्रह्म होते हुए भी भक्तिरस को भोग करने के लिए तथा संपूर्ण विश्व को प्रेम सुधा पान करने के लिए नामोच्चारण का घोष करते एवं कराते हैं। परमाम्बा परमाशक्ति राधा स्वयं सर्वेश्वरी होने पर भी मीरा का रूप धारण करके घुंघरू बांधकर नाचती-फिरती है और अंत में व्रज की शरण लेती हैं-

मुक्ति कहे गोविंद सों, मेरी मुक्ति कराय
ब्रज-रज उड़ि मस्तक चढै, मुक्ति मुक्त छै जाय।
कबिरा-कबिरा क्या करे, जा जमुना के तीर।
इक गोपी के प्रेम में, बह गए कोटि कबीर॥

दर्शन

मुनि सुखलाल

अपरिग्रह का सुख

अर्थ आज जीवन की मजबूत धुरी बन गया है। ऐसा नहीं है कि पैसे का मूल्य पहले भी न रहा हो। पर आज इसने जितनी प्रभुता प्राप्त कर ली है उतनी पहले कभी प्राप्त की या नहीं, कहा नहीं जा सकता। आज तो 'अर्थ एवं प्रधानम्' पैसा है तो सब कुछ है, अन्यथा कुछ भी नहीं है। पर यह भी सच है कि इससे अनेक समस्याएं भी पैदा हुई हैं। आज की अधिकांश समस्याएं पैसे के आस-पास ही घूमती हैं। कुछ उसके अभाव की हैं तो कुछ अतिभाव की। आवश्यकता है इससे एक सम्यक् दृष्टि जागे। जब तक वह नहीं जागती है तब तक अर्थ का होना और न होना दोनों समस्या बने रहेंगे।

पहली बात तो यह है कि पदार्थ अपने आप में परिग्रह नहीं है। सोना-चांदी, हीरे-जवाहरात भी अपने आप में परिग्रह नहीं हैं। अपने आप में वे केवल पदार्थ हैं। जब ममत्व दृष्टि जागती है तो पत्थर भी परिग्रह बन जाता है। गृहस्थ जीवन में पैसे की उपयोगिता से इन्कार नहीं किया जा सकता। पर उपयोगिता जब ममत्व के नीचे दब जाती है तो उचित-अनुचित के सारे पैमाने गिर जाते हैं। ऐसे क्षणों में पैसे की कोई उपयोगिता नहीं रहती। आदमी केवल उसके ममत्व का भार ढोता है। आदमी के पास करोड़ रुपए हैं। क्या उपभोग है उस रुपए का? या तो वह तिजोरियों में भरा पड़ा है या लॉकर में बंद पड़ा है। उस पर केवल ममत्व का ताला लगा पड़ा है। पुराने जमाने में धन को जमीन में या मकान की दीवारों में दबाकर रखा जाता था। पर उस धन का क्या अर्थ हुआ? जैसे जमीन में पत्थर पड़े हैं वैसे ही धन पड़ा है।

लॉकर या तिजोरियों में बंद धन के भी कम खतरे नहीं। कभी कोई इन्कम टैक्स वाला आता है तो कभी कोई रेड वाला आ धमकता है। पैसे के लिए पग-पग पर आपदाएं हैं। पहले तो उसके लिए मजदूरों से झगड़ना पड़ता है। जब किसी के पास पैसा जमा हो जाता है तो उसके लिए अनेक प्रतिद्वंद्वी खड़े हो जाते हैं। दुनिया में कोई किसी को झट से ऊपर नहीं आने देता है। अक्सर ऐसे किस्से सुनने में आते हैं कि किसी आदमी ने पैसे की दौड़ में जोर से दौड़ना शुरू किया तो दूसरे ने उसकी टांग खींच ली। सचमुच यह केकड़ावृत्ति बड़ी जबर्दस्त है। जो गिरता है वह चारों खाने ऐसा चित्त हो जाता है कि जन्मभर उस पीड़ा को नहीं भूल सकता।

पैसे के लिए चोरों के डर से गुजरना पड़ता है। परिवार के लोगों से झगड़ा मोल लेना पड़ता है। पैसा एक आदमी कमाता है, पर उसके दावेदार अनेक खड़े हो जाते हैं। ऐसा बहुत कम देखने में आता है कि पैसा परिवार में विग्रह पैदा न करे। बाप के धन पर बेटे भी कम दावपेंच नहीं खेलते। घर-घर में झगड़े देखने को मिल जाते हैं।

बौद्ध-साहित्य में एक कथा आती है। एक चील को कहीं से एक मांस का मोटा टुकड़ा मिल गया। थोड़ा मांस उसके खाने के उपयोग में आ गया। पर फिर भी काफी मांस बचा हुआ था। वह उसे लेकर आकाश में उड़ी। इतने में अनेक चीलें वहां इकट्ठी हो गई। वे उस पर झपट्टा मारने लगीं। जबर्दस्त आक्रमण-प्रतिरक्षण शुरू हो गया। कुछ देर तक तो उसने सामना किया। पर आखिर वह थक गई। एक दूसरी तगड़ी चील ने वह मांस का टुकड़ा छीन लिया। अब सारी चीलों ने पहली चील को छोड़ दिया, दूसरी चील पर झपटने लगीं। उसने भी कुछ देर तक प्रतिरोध किया। पर आखिर वह भी थक गई। एक तीसरी चील ने उससे वह टुकड़ा छीन लिया। इस तरह जिस चील के पास टुकड़ा आता सभी उस पर झपट्टा मारने लगतीं। एक राजा ने यह तमाशा देखा तो उसे वैराग्य हो गया। उसे प्रतिबोध हो गया कि सारा झगड़ा स्वामित्व का है। आदमी के पास जब भी अतिशय पैसा इकट्ठा होता है तो उसे दूसरों का आक्रमण सहना ही पड़ता है। बहुत बार पैसे के लिए आदमी को प्राण भी गंवा देने पड़ते हैं। गहनों को लेकर ऐसे किस्से तो अक्सर सुनने को मिलते हैं। पर आदमी पर ममत्व का इतना गहरा पहरा है कि वह उससे आसानी से मुक्त नहीं हो सकता।

सचमुच यह ममत्व उसके अपने लिए ही अलाभकर नहीं होता है परंतु उससे पूरी समाज-व्यवस्था भी रुग्ण बनती है। इस आध्यात्मिक सच्चाई को समझ पाना बड़ा मुश्किल है। पर आज तो अर्थशास्त्र भी आध्यात्मिक सच्चाई को पहचानने लगा है। दुनिया की जितनी समस्याएं हैं वे अधिकांशतः चोटी के उन लोगों से जुड़ी हुई हैं जिनके पास अपार धन है। वह धन उनके लिए भी बहुत सुखकर नहीं होता है, पर जब तक आदमी को सम्यक्त्व प्राप्त नहीं हो पाता, ममत्व की वह मूर्च्छा नहीं टूटती। यह सही है कि आदमी को जीवन-निर्वाह के लिए कुछ परिग्रह की आवश्यकता होती है। इसीलिए अणुव्रतों में उसका निषेध नहीं है। पर जब आवश्यकताएं इच्छाएं बन जाती हैं तो उनका पार पाना मुश्किल हो जाता है। ■

दुनिया की जितनी समस्याएं हैं वे अधिकांशतः चोटी के उन लोगों से जुड़ी हुई हैं जिनके पास अपार धन है। वह धन उनके लिए भी बहुत सुखकर नहीं होता है, पर जब तक आदमी को सम्यक्त्व प्राप्त नहीं हो पाता, ममत्व की वह मूर्च्छा नहीं टूटती।

नए मेट्रो मैन की सफलता के सूत्र

प्रकाश जैन

दिल्ली का दिल कहे जाने वाले दिल्ली मेट्रो रेल कॉरपोरेशन (डीएमआरसी) के दूसरे प्रबंध निदेशक मंगू सिंह अपने क्षेत्र के सबसे काबिल व्यक्तियों में से एक हैं। ई.श्रीधरण की अनुभवी आंखों ने मंगू सिंह के रूप में उत्तराधिकारी चुना। इससे पहले वे डीएमआरसी में ही निदेशक (कार्य) के पद पर कार्यरत थे। 15 दिसम्बर 1955 को उत्तरप्रदेश के बिजनौर जिले में जन्में मंगू सिंह ने इस वर्ष पहली तारीख को नए प्रबंध निदेशक के रूप में पदभार संभाला। इस पद पर उनकी नियुक्ति पांच साल के लिए हुई है।

प्रारंभिक शिक्षा बिजनौर से प्राप्त करने के बाद उन्होंने 1979 में रुड़की विश्वविद्यालय (अब आईआईटी रुड़की) से सिविल इंजीनियरिंग में स्नातक किया और 1981 में संघ लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित प्रतियोगिता परीक्षा में आईआरएसई चुने गए। उन्होंने भारतीय रेलवे में विभिन्न पदों पर काम किया और कोलकाता मेट्रो रेलवे के उप मुख्य अभियंता के पद तक पहुंचे। वे डीएमआरसी से 1997 में मुख्य अभियंता/मुख्य परियोजना प्रबंधक के रूप में जुड़े। कोलकाता मेट्रो में उन्होंने काफी योगदान दिया। उन्हें बड़ी मेट्रो इंजीनियरिंग परियोजनाओं (सिविल) के क्रियान्वयन में क्रांतिकारी बदलाव लाने के लिए भी जाना जाता है। उन्होंने दिल्ली मेट्रो के 'क्लीन डेवलपमेंट मैकेनिज्म' का भी सफलतापूर्वक नेतृत्व किया। इसे दुनिया के रेलवे ट्रांसपोर्टेशन सेक्टर में इस तरह की पहली सफल परियोजना माना जाता है।

मंगू सिंह को कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। कोलकाता मेट्रो को पूरा करने में अहम योगदान देने के लिए उन्हें नेशनल अवॉर्ड (रेलवे सप्ताह अवॉड, 1996) मिल चुका है।

कोई भी बड़ा और महत्वपूर्ण कार्य तभी सफल होता है, जब उसे जुड़े लोग टीम भावना के साथ काम करें। मंगू सिंह इसी मंत्र में विश्वास करते हैं। वे अपनी टीम पर पूरा भरोसा करते हैं और उनमें सभी लोगों को साथ लेकर चलने का नैसर्गिक गुण और जज्बा है। दिल्ली मेट्रो में अपने आखिरी दिन ई.श्रीधरण ने जब सिंह से पूछा कि क्या वे चार्ज लेने को तैयार हैं

तो उन्होंने बिना एक पल की देरी किए दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, केवल मैं ही नहीं, पूरी टीम चार्ज लेने के लिए तैयार है।

मंगू सिंह की इन्हीं विशेषताओं को देखते हुए श्रीधरण ने कहा था, 'मेरे उत्तराधिकारी मंगू सिंह काफी सक्षम और पेशेवर व्यक्ति हैं।' सिंह न केवल तकनीकी रूप से समर्थ हैं, बल्कि उनकी प्लानिंग भी जबर्दस्त होती है। रेल आधारित ट्रांसपोर्टेशन परियोजनाओं की योजना और उनके क्रियान्वयन का उन्हें शानदार अनुभव है। उन्होंने कोलकाता और दिल्ली मेट्रो के अलावा देश के दूसरे शहरों- मुम्बई, हैदराबाद, बेंगलुरू, चैन्नई, लखनऊ, कोच्चि, जयपुर आदि के मेट्रो सिस्टम का प्लान और प्रोजेक्ट तैयार करने में सहायता की है।

मंगू सिंह में अपने काम के प्रति गजब की निष्ठा है। उन्हें जो भी काम सौंपा गया, उसे पूरा किया और कार्य की सफलता सुनिश्चित की। वे निर्धारित समय-सीमा और तय बजट में काम पूरा करने में यकीन रखते हैं, वह भी गुणवत्ता में कोई समझौता किये बगैर। नई दिल्ली से एयरपोर्ट तक मेट्रो का विस्तार, जो दुनिया के किसी भी बेहतरीन मेट्रो सिस्टम का मुकाबला कर सकता है, उनकी इस खूबी का अनुपम उदाहरण है।

-डी-69, प्रीत विहार, दिल्ली-110092

अमृत फल आंवला

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम

चरक संहिता के मुताबिक आंवले के प्रयोग से सौंदर्य, स्फूर्ति, स्मरण शक्ति, नवयौवन तथा इन्द्रियों के बल की वृद्धि होती है। इसके सेवन से शारीरिक तथा मानसिक उत्तेजना नियंत्रित रहती है तथा व्यक्ति में संयम की भावना पैदा होती है। इसकी तासीर शीतल होती है। यह स्त्री एवं पुरुष दोनों के लिए ही हितकारी होता है। समुचित उपाय से इस्तेमाल किये जाने पर आंवला बहुउद्देशीय दवा तथा ताकत प्रदत्त करने वाला टॉनिक भी बन जाता है। अपने गुणों की व्यापकता के वजह आंवले को भारतीय चिकित्सा प्रणाली में अमृत माना जाता है।

आंवला अक्सर समस्त भारतवर्ष में सुगमता से प्राप्त हो जाता है। वैज्ञानिक परीक्षण के अनुसार आंवले में 82.2 प्रतिशत पानी, 14.1 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.7 प्रतिशत नमक, 0.5 प्रतिशत प्रोटीन, 0.1 प्रतिशत वसा, 0.05 प्रति कैल्शियम, 0.02 प्रतिशत फास्फोरस और 2.4 प्रतिशत रेशा होता है। 100 ग्राम आंवले में 1.2 मिलीग्राम आयरन, 0.2 मिलीग्राम निकोटिनिक अम्ल होता है। इसके अलावा आंवले में विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में होता है। चाहे आंवला आप कच्चा खाएं अथवा पकाकर इसके विटामिन कभी समाप्त नहीं होते हैं और सूखने के बाद भी इसके विटामिन और पौष्टिक तत्व ज्यों के त्यों बने रहते हैं। आंवला पांच रसों खट्टा, मीठा, कड़वा, चटपटा, कसैला होने के कारण अधिक गुणकारी होता है। इन पांच रसों के वजह ही आंवले में व्याधि प्रतिरोधक सामर्थ्य भरपूर मात्रा में समाहित रहती है।

महिलाओं के लिए आंवला स्फूर्ति प्रदत्त करके उसके यौवन को स्थायी बनाये रखने में सहायक हाता है। गर्भावस्था में स्त्री के रक्ताल्पता की आपूर्ति भी आंवला करता है।

20-25 ग्राम आंवले का मुरब्बा सेवन करने से जरूरी विटामिन 'सी' प्राप्त हो जाती है। आंवले द्वारा निर्मित 'च्यवनप्राश' के सेवन से सर्दी-जुकाम तथा दमे के मरीजों को भी काफी फायदा मिलता है। मधुमेह (डायबिटीज) के मरीजों को आंवले का रस चूसना बहुत लाभप्रद होता है, चूंकि आंवला रक्त में शुगर (शक्कर) को बढ़ने से रोकता है।

-जन शिक्षण इंटर कॉलेज, प्रेमपुर-बड़ागांव, कानपुर-208001

वनस्पति

सुप्रिया

गुणकारी औषधि है नींबू

प्रत्येक राज्य में आसानी से उपलब्ध हो जाने वाला ऐसा फल है जो अपने रासायनिक गुणों के कारण फल कम किन्तु गुणकारी औषधि के रूप में अधिक जाना जाता है। नींबू पेट रोग निवारक, सौंदर्य प्रसाधक व नेत्र रोगनाशक है।

आंख शरीर का सबसे कोमल अंग है। धूप, धुआं, बरसात का गंदा पानी व लापरवाही के कारण आंखों में अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं। स्वास्थ्य संगठन की ताजा रिपोर्ट के अनुसार विश्व में लगभग दो करोड़ स्त्री-पुरुष नेत्रहीन हैं। इनमें एक करोड़ बीस लाख दोनों आंखों से तथा अस्सी लाख एक आंख से है। विश्व के इन नेत्रहीनों में तीस प्रतिशत से अधिक नेत्रहीन भारतीय हैं। यह चिंताजनक है कि भारत में अधिक नेत्रहीन होने का बड़ा कारण हमारी लापरवाही है, जबकि जनसाधारण यह भी स्वीकार करता है कि आंख है तो जहां है।

अपने रासायनिक गुणों के कारण फल कम किन्तु गुणकारी औषधि के रूप में अधिक जाना जाता है।

शरीर की बनावट में यूं तो प्रत्येक अंग का अपना-अपना महत्व है। फिर भी आंख अधिक महत्वपूर्ण, बेशकीमती तथा कोमल है। लापरवाही को त्यागकर नींबू को औषधि के रूप में अपनाकर नेत्र रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है।

● मोतियाबिंद की प्रारंभिक अवस्था में नींबू के रस को महीन कपड़े में छानकर बूंद-बूंद आंखों में डालने से बहुत अधिक लाभ होता है। आंखों की ज्योति में प्रभावकारी वृद्धि होती है।

● मोतिबाबिंद होने पर प्राय: ऑपरेशन किया जाता है। ऑपरेशन के लिए पहले इसके पकने की प्रतीक्षा की जाती है, क्योंकि इससे पूर्व ऑपरेशन नहीं किया जाता। मोतियाबिंद में नींबू के उपयोग से आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की जा सकती है। गाय के दूध से बने मक्खन को नींबू के रस में मिलाकर अच्छी तरह घोंट लें। जल मिलाकर पुन: इस मिश्रण को बीस दिन तक प्रतिदिन घोंटे। इसके बाद रात्रि में सोने से पूर्व सलाई से इस मिश्रण को लगाएं। थोड़े दिनों के नियमित प्रयोग से मोतियाबिंद से आंखों को निजात मिल जाएगी।

● छोटी कटेरी की जड़ को नींबू के रस में रगड़कर आंखों में लगाने से धुंध नष्ट हो जाती है।

● बारहसिंगा के सींग के बुरादे को नींबू के रस में डालकर खरल करके शुष्क चूर्ण बना लें। इस चूर्ण की बनी गोलियों को गुलाब जल में घिसकर आंखों में लगाने से जाला और धुंध नष्ट हो जाती है।

● धूप ताप के कारण आंखों में लाल हो जाने पर जमालघोटा की जड़ को नींबू के रस में पीसकर थोड़ी सी शुद्ध अफीम मिलाकर पलकों पर लगाने से लालिमा से छुटकारा मिलता है। लाल पड़ी आंखों में पीड़ा होने पर लोहे के बर्तन में नींबू के रस को तब तक घोटते रहें जब तक वह गाढ़ा न हो जाए। इसका लेप आंखों के बाहर करने से आंखों की पीड़ा में आराम मिलता है।

● नींबू के रस में एक हल्दी की गांठ डालकर रख दें। जब नींबू का रस सूख जाए तो चार बार नींबू का रस इस हल्दी की गांठ को पिला दें। इसके बाद हल्दी की गांठ को सुखाकर रख लें। इस हल्दी की गांठ को प्रतिदिन सुबह-शाम पानी में घिसकर आंखों में लगाने पर नेत्र दृष्टि तीव्र होती है और जाला तथा फूला कटकर साफ हो जाता है।

● नींबू से गुणकारी सुरमा बनाया जा सकता है। दस ग्राम काला सुरमा नींबू के रस में शुद्ध कर लें। इस सुरमें का खरल करके जितना बारीक हो सके कूट लें। इस प्रकार से प्राप्त सुरमा प्रतिदिन सलाई से आंखों में लगाने से आंखें निरोग रहती है।

–'विभावरी', जी-9, सूर्यपुरम, नन्दनपुरा, झांसी-284003 (म.प्र.)

नानक दुखिया सब संसार

विश्वनाथ गुप्त

अक्सर लोग अपने आप को सुखी समझते हैं, लेकिन देखा जाए तो वे भी किसी न किसी दु:ख से दु:खी हैं। फिर जो दु:खी हैं, वे तो दु:खी हैं ही। इसलिए गुरुनानक का यह कथन बिल्कुल सत्य है- नानक दुखिया सब संसार।

संत विनोबा भावे ने अपने अनुभव से यह कहा– वह मूर्खों में भारी मूर्ख है जो मानता है कि संसार में सुख है। मुझे तो जो मिला, दुख की कहानी सुनाता ही मिला। जब हम सुख की कामना करते हैं और जब वह सुख हमें नहीं मिलता तो हमें दु:ख होता है। इसलिए ठीक ही कहा गया है कि सुख की इच्छा ही संपूर्ण दु:खों का कारण है। कारण के मिटने पर कार्य अपने आप मिट जाता है। सुख की इच्छा मिटने पर संपूर्ण दुखों का नाश हो जाता है।

जितने ज्यादा सुखों की कामना हम करेंगे, उनके न मिलने पर उतने ही ज्यादा दु:ख हमें होंगे। हम संतों, महात्माओं और गुरुजनों की बात न मानकर सुखों की कामना करते रहते हैं और उनके न मिलने पर रोते हैं। गीता में कहा गया है- तुम्हारा क्या गया जो तुम रोते हो। तुम क्या लाए थे, जो तुमने खो दिया। तुमने क्या पैदा किया जो नष्ट हो गया। जो कुछ लेकर आए, जो लिया, इसी (परमात्मा) से मिला। जो दिया, इसी को दिया। खाली हाथ आए और खाली हाथ चले जाआगे। जो आज तुम्हारा है, कल वह किसी और का था, परसों किसी और का होगा। तुम इसे अपना समझकर प्रसन्न हो रहे हो। बस यही प्रसन्नता तुम्हारे दु:खों का कारण है।

एक बात और। जब हम सुखी होते हैं तो मौज-मस्ती में डूबे रहते हैं। उस वक्त हमें भगवान की याद नहीं आती, लेकिन जब हमें कोई दु:ख होता है या किसी चीज की कामना होती है तो हम फौरन भगवान के पास दौड़ते हैं। उसकी विनती करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, चढ़ावा चढ़ाते हैं।

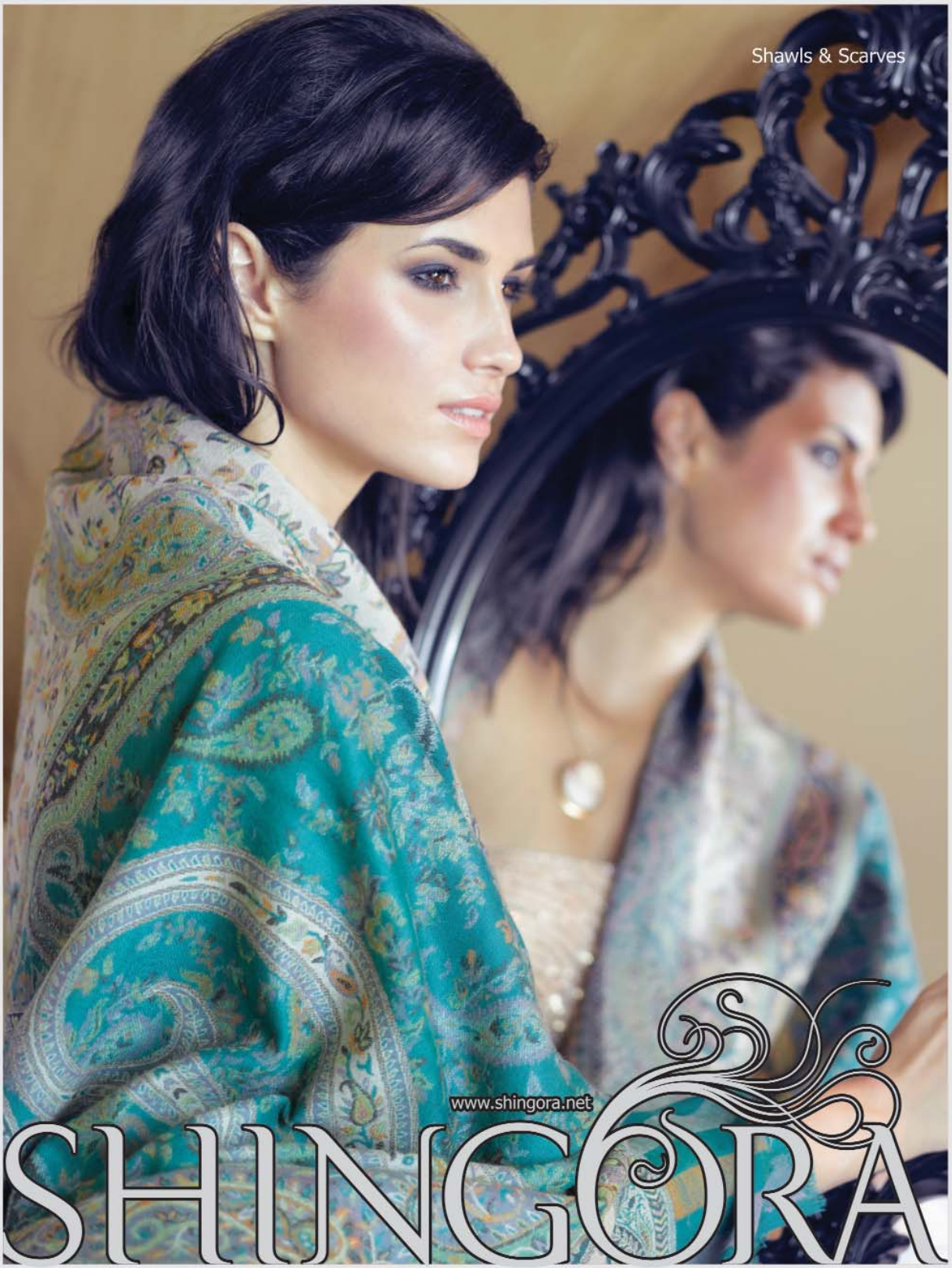

SHINGORA TEXTILES LIMITED (RETAIL UNIT):
544, National Road, Ludhiana-141001 Tel: 0161-2404728 Fax: 0161-2676497 Email:retail@shingora.net

धर्म-प्रवाह

मंदिर तो इंसान स्वयं है

रामकिशोर शर्मा

भगवान ने सृष्टि की रचना अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से की है– पृथ्वी का घूमना, रात-दिन का बनना, ग्रहण का लगना, वर्षा का होना, मौसमों का बदलना, मनुष्य की उत्पत्ति- सब कुछ अत्यंत सुचिंतित है। भगवान एक डिजाइनर है। उनकी श्रेष्ठ कलाकृति पुरुष है, और श्रेष्ठतम स्त्री, क्योंकि स्त्री में शिशु को जन्म देने की क्षमता भी है। शिशु के जन्मते ही दूध का प्रबंध भी हो जाता है। ज्योतिष का इनसे कोई संबंध नहीं।

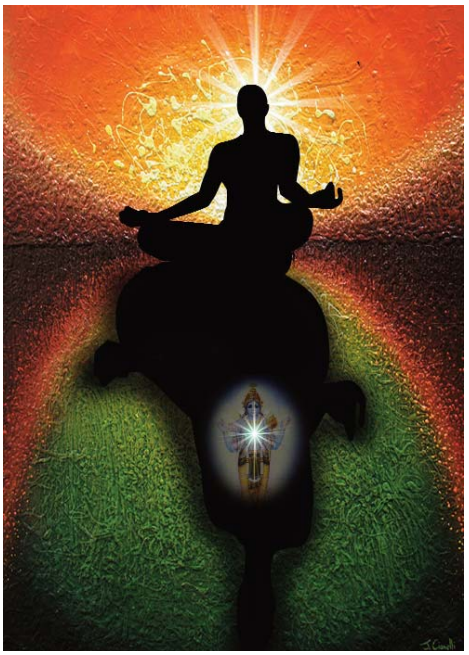

जब एक कप-प्लेट बिना डिजाइनर के नहीं बन सकती, तो मनुष्य का डिजाइन बिना डिजाइनर ऐसे कैसे बन सकता है। आंखें पैरों में लग जातीं और अंगूठा नहीं होता तो कलम भी हाथ में नहीं पकड़ सकते थे।

जिस समय रामचन्द्र का राज तिलक होने वाला था, ठीक उसी समय उन्हें वनवास हो गया। भरतजी ने वशिष्ठ मुनि से पूछा कि यह लग्न आपने शोध कर रखा था, आपसे ज्यादा ज्योतिष का और कोई ज्ञाता नहीं, फिर ऐसा क्यों हुआ? वशिष्ठ ने उत्तर दिया– त्रिया चरित्रम् पुरुषस्य भाग्यम दैवो जानाति, कुतः मनुष्यः! अर्थात् स्त्री का चरित्र और पुरुष का भाग्य देवता भी नहीं जानते, मनुष्य का तो कहना ही क्या।

आज संसार के सभी विकसित देशों ने ज्योतिष विद्या को नकार दिया है। अपने ही समाज के कुछ हिस्सों में यह प्रचलित है। राहू, केतु और शनि आदि ग्रहों को तो बहुत बदनाम कर दिया गया है कि फलां जन्म कुण्डली में सप्तम स्थान में एक साथ खाट बिछाकर जम कर बैठ गए हैं। ये ग्रह तीन हजार किलोमीटर दूर आसमान में निर्जीव हैं। वे भला किसी का क्या बिगाड़ेंगे? क्या वे यहां आकर किसी को सातवीं मंजिल से नीचे फेंक कर वापस चले जाते हैं या यहां भाड़े के गुंडों द्वारा परेशान कराते हैं?

इसी तरह राशिफल को बहुत महत्व दिया जाता है। राम और रावण की एक ही राशि थी। कृष्ण और कंस की राशि भी एक थी। रावण और कंस मारे गए, किन्तु राम और कृष्ण का कुछ नहीं बिगड़ा। किसी की भी जन्मपत्री या राशि में यह नहीं लिखा कि उसके साथ बलात्कार, दुर्घटना, जेल या चोरी होगी।

लोगों ने देवताओं को पटाने के अनेक फार्मूले निकाले हुए हैं। पचास पैसे की अगरबत्ती जलाकर हाथ जोड़ते हैं और बाद में भगवान को सारे काम सौंप देते हैं। उन्हें मुकदमा भी जितवाना है, चुनाव भी जितवाना है, फैक्टरी भी ठीक चलवानी है, बच्चे का भी ख्याल रखना है, जो बीमार है उसे भी ठीक करना है। यह भक्ति नहीं, यह तो सौदेबाजी है। ऐसा कोई देवता ही पैदा नहीं हुआ जो मनोकामनाएं पूरी करता हो। लोग ईश्वर को एक ऐसा व्यक्ति मानते हैं जिसे अपने पक्ष में थोड़े प्रलोभन या वाक छल द्वारा सहज ही बहकाए-फुसलाए जा सकते हैं। वास्तव में इतने देवता ही नहीं है, जितने हमने मान रखे हैं।

हम भगवान को देख नहीं सकते। मृत्यु के समय सगे-सबंधी चारपाई के चारों ओर खड़े होते हैं, आत्मा सब के सामने निकल कर जाती है, किन्तु हम देख नहीं सकते कि वह किस दिशा में गई। भगवान कण-कण में विद्यमान हैं। यही आत्मा प्रत्येक का निजी भगवान है। जब मैं सांस लेता हूं तो भगवान को महसूस करता हूं कि बिना कुछ किए ही हमारी सांस कितनी आसानी से हमारे अंदर चली जाती है और जीवन का संचार करती है।

विश्व में केवल एक ही मंदिर है और वह है मनुष्य का शरीर। इस स्वरूप से अधिक कोई पवित्र स्थान नहीं। महर्षि वेदव्यास ने चारों वेद, छह शास्त्र, 108 पुराण और महाभारत अकेले लिखी थी। किसी ने प्रश्न किया कि इतने सारे ग्रंथ कोई पढ़ भी नहीं सकता, इनका निचोड़ बताएं। उन्होंने उत्तर दिया, परोपकाराया साधूनाम्। परोपकार कीजिए।

कोई राजा के घर में जन्म लेता है, कोई फकीर के घर। हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश विधि हाथ। अंतरिक्ष परी सुनीता विलियम्स सौरमंडल में 195 दिनों तक घूमती रही, उसे स्वर्ग-नरक जैसे कोई देश नहीं मिले। वास्तव में यह देश नहीं परिस्थितियां हैं, जिनमें हम रहते हैं। ■

संत और मधुमक्खी

मृदुला सिन्हा

राम की कथा भिन्न-भिन्न कथावाचक संत भिन्न-भिन्न शैली में कहते हैं। कथावाचक संत दो प्रकार से मधुमक्खी की भूमिका में आकर सामान्यजन से भिन्न हो जाते हैं। आमजन किसी फूल को हाथ में लेकर उसे निचोड़ देते हैं। फिर उसका रस और सुगंध निकालते हैं। फूल की पंखुड़ी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। उसे फेंक देते हैं। मधुमक्खी ऐसा नहीं करती। वह फूल से पराग इकट्ठा कर लेती है, उसका रूप-स्वरूप नष्ट नहीं होता। फूल को पता भी नहीं चलता, उसकी हानि भी नहीं होती, कोई विपत्ति भी नहीं आती और उससे उसका सत्व निकाल लिया जाता है। आम आदमी के आनंद प्राप्त करने और संत के आनंद प्राप्त करने और आनंद देने में यही अंतर है।

दूसरे रूप में भी संत की भूमिका मधुमक्खी की होती है। जहां बड़े विद्वान और विशेषज्ञ बड़ी पुस्तकों से ज्ञान ग्रहण करते हैं, वहीं संत पुरुष विभिन्न शास्त्रों, उपनिषदों और लोकसाहित्य से ज्ञान संग्रह करते हैं। वे घूमते रहते हैं। वे कथा से जो ज्ञान उड़ेलते हैं वह मधुमक्खी की तरह विभिन्न क्यारियों से पराग उठा कर तैयार किए गए मधु जैसा ही होता है। जिस प्रकार मधु मनुष्य का स्वास्थ्यवर्द्धन करता है उसी प्रकार संत महात्मा द्वारा कही गई कथाएं मनुष्य का व्यक्तित्व निर्माण करता है। वैज्ञानिक, प्रोफेसर और विभिन्न विद्वान इंजीनियर, डॉक्टर, सॉफ्टवेयर इंजीनियर बनाते हैं। और भी बहुत कुछ। वह पैसा कमाता है। परन्तु संतों की कथाएं मानव का निर्माण करती हैं। वहीं मानव और मानवी सारे सांसारिक कार्य करते हुए भी हृदय से संत होते हैं। क्योंकि उन्होंने मधुमक्खी रूपी संत के कथा सागर में स्नान कर अपने मन और तन को शुद्ध किया होता है। तुलसीदासजी ने कहा है- 'काक होंहि पिक बकऊ मराला।' संत के साथ रहकर कौआ, कोयल और बगुला भी हंस हो सकता है। ऐसे संत हमारे आसपास ही हैं। ■

विचार

आचार्य शिवेन्द्र नागर

योगी से पहले उपयोगी बनो

आज के इस दौड़ते भागते जीवन में हम शब्दों का प्रयोग तो करते हैं परन्तु उस शब्द के भीतर छुपे ज्ञान को नज़रअंदाज कर देते हैं। किसी भी भाषा में कोई भी शब्द यदि विद्यमान है तो उस शब्द का कोई न कोई मूल दर्शन अवश्य होगा। जैसे हम सबको 'व्यक्ति' नाम से संबोधित किया जाता है जिसका सम्भवत: अर्थ हो सकता है कि अभी हम सब व्यक्त हैं। अब से कुछ समय पहले अव्यक्त थे तथा कुछ समय उपरांत पुन: अव्यक्त हो जाएंगे। अर्थात् जब तक हम संसार में व्यक्त हैं, हम सब व्यक्ति हैं।

इसी प्रकार आम भाषा में जो शब्द हैं चाहे वे संस्कृत से हों या लैटिन से हों, उन सब शब्दों का चयन किसी दर्शन के बाद किया गया होगा। बात शब्दों के भंवर में फंसने की नहीं है अपितु उन शब्दों के माध्यम से इस संसार भंवर से पार लगने की है। आज हम बात करते हैं उस शब्द की जिसका वर्चस्व पूरा विश्व मानता है। इस शब्द के अर्थ अनेक दार्शनिकों ने अपने स्वाध्याय के अनुसार दिए हैं। वह शब्द है योग या योगी। यह बात संसार में अक्सर देखी गई है कि मंत्री पहले उपमंत्री बनता है, आयुक्त से पहले उपायुक्त बनता है इत्यादि। भारत एक ऐसा देश है जहां धर्म हर कोने पर विराजमान है। यह योगियों का देश है। योगियों को भगवानस्वरूप माना जाता है। भगवान कृष्ण भी जनमानस से कहते हैं लोक कल्याण के लिए कर्म करो। पहले समाज के लिए उपयोगी बनो फिर योगी बनो। हमारे समाज में योगियों की तो आवश्यकता है परन्तु उससे पहले संसार के लिए उपयोगी बनने वालों की अत्यधिक आवश्यकता है।

व्यक्ति जब, अपनी परिधि को और आगे बढ़ाता है तो स्वार्थ को त्याग कर समाज या देश के लिए सोचता है। वह समाज व देश के लिए उपयोगी है। ऐसा व्यक्ति पूरे समाज के उत्थान की चर्चा और कार्य करता है और अंत में आता है सम्पूर्ण पुरुष, जो समाज और देश से ऊपर उठ कर पूरी मानवता के विषय में सोचता है।

इस संसार में चार तरह की प्रकृति हैं- खनिज, वनस्पति, पशु, मनुष्य। इन सबकी परिधि अर्थात् सीमा तय है। खनिज वस्तुएं बिना बाहरी सहयोगी से एक जगह से दूसरी जगह नहीं जा सकतीं। वनस्पतियों में जन्म, मृत्यु, ज़रा, गति इत्यादि संबंध हैं परन्तु वह भी पशु जगत् की तुलना में नगण्य हैं। पशु जगत का आधार अधिक व्यापक है परन्तु मनुष्य का वर्चस्व सर्वाधिक है। मनुष्य की परिधि असीमित है।

इस विचार को आगे बढ़ाते हुए अगर हम अपने आसपास नजर दौड़ाएं तो पाएंगे कि मनुष्य भी कुछ हद तक इन्हीं विभागों में बंटा हुआ है। कुछ लोग पूर्णत: स्वार्थमय जीवन जीते हैं। उनके लिए स्वयं का सुख सर्वोपरि है। घर, परिवार, समाज का विचार भी उनके मस्तिष्क में नहीं आता। आता है तो केवल अपने शरीर का सुख। इस तरह के मनुष्य को हम खनिज मानव ही कह सकते हैं।

इसके उपरांत परिवार में आसक्त व्यक्ति की बात करते हैं। वह भी मूलत: स्वार्थी है। परन्तु उसने अपने जीवन की परिधि अपने से हटाकर परिवार तक कर दी है। वह परिवार, बच्चों के लिए त्याग करने का कोई विचार अंगीकार कर लेता है। ऐसा व्यक्ति परिवार के लिए उपयोगी है, ऐसे व्यक्ति को हम वनस्पति मानव की संज्ञा दे सकते हैं।

व्यक्ति जब, अपनी परिधि को और आगे बढ़ाता है तो स्वार्थ को त्याग कर समाज या देश के लिए सोचता है। वह समाज व देश के लिए उपयोगी है। ऐसा व्यक्ति पूरे समाज के उत्थान की चर्चा और कार्य करता है और अंत में आता है सम्पूर्ण पुरुष, जो समाज और देश से ऊपर उठ कर पूरी मानवता के विषय में सोचता है। इसी तरह के व्यक्ति के लिए कहा है-

''कबिरा खड़ा बाजार में,
मांगे सबकी खैर।
ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर॥''

स्वामी रामतीर्थ जी ने कहा- ''ईशभक्त से पहले देशभक्त बनो''।

आज हम समाज में योगी तो बहुत देखते हैं परन्तु क्या वे समाज के लिए उपयोगी हैं? समाज के लिए उपयोगी बनने का अर्थ यह नहीं कि संन्यास लेकर जंगल चले जाएं। संन्यास एक मान्य प्रथा है लेकिन हममें से कितने लोग इसके अधिकारी हैं? कितने लोग अध्यात्म की उस सीमा तक पहुँचे हैं कि संन्यास की स्थिति तक आ जाएं? भगवद्गीता के छठे अध्याय के पहले श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि-

अनाश्रित: कर्मफलं कार्यं कर्म करोति य:।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रिय:॥

जो कर्मफल का आश्रय न लेकर उत्साहपूर्वक कर्त्तव्यकर्म करता है वही संन्यासी है तथा वही योगी है। और अग्नि अर्थात् गृहस्थ का त्याग करने वाला संन्यासी नहीं है तथा अक्रिय रहने वाला भी योगी नहीं है। संन्यास योग के नाम पर घर-परिवार छोड़कर आश्रमों में बैठ जाना वह संन्यास नहीं है। परन्तु अपने कर्त्तव्य कर्म को उत्साहपूर्वक आसक्तिरहित करना संन्यास है। कर्त्तव्यकर्म को छोड़ना संन्यास नहीं है। हम भगवद्गीता को तो मानते हैं पर भगवद्गीता की नहीं मानते। इसलिए आवश्यक है कि हम परिवार के लिए, समाज के लिए उपयोगी बनें। यदि उपयोगी नहीं तो योगी नहीं बन सकते। जो उपयोगी नहीं बन सकता वह भोगी बनेगा। और जो भोगी है वह रोगी बनेगा। याद रखें जब तक हमारा उपयोग है, हमारे अंदर कोई भी गुण है जिसकी उपयोगिता है तो हमारी कद्र है, मान है। व्यक्ति सिगरेट की तरह है जब तक जरूरत हो लोग होठों से लगाकर रखते हैं। जरूरत समाप्त होने पर पैरोंतले कुचल देते हैं। इसलिए जो भी कर्त्तव्यकर्म हैं उनको पूरे मनोयोग से, पूरे उत्साह से हम करते चलें। उनको प्रभु का कार्य समझ कर करें। तो हमारी रक्षा प्रभु स्वयं ही करेंगे। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं- जो भी व्यक्ति समाज से केवल लेता है, देता नहीं, समाज के लिए कुछ करता नहीं वह चोर है।

हम अपने आप को निमित्त बनाकर रहें। इस भाव से अपने कार्यों को करें कि प्रभु मुझे आपने इस कार्य के लिए चुना है। जो भी फल मिलेगा मुझे स्वीकार है। हम अपने कर्म करें लेकिन आसक्ति रहित होकर करें नहीं तो सुख नहीं मिलेगा।

अंत में निष्कर्ष यह है कि अपने सांसारिक कर्त्तव्य कर्म को हम दक्षता से तथा आसक्ति रहित होकर करें तभी हम संन्यासी तथा योगी बनने के अधिकारी हैं। इसलिए योगी से पहले उपयोगी बनें। ■

STOP WORRYING, EMPOWER YOURSELF NOW

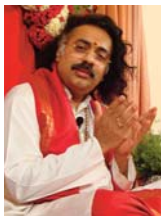

Shri Shri Nimishananda

Today, worry is the major block in our lives. It is a veritable black hole – all our energy goes into it, but nothing ever comes out. If worrying could have solved our problems, it would have been worthwhile worrying. However, as human beings, none of us have a right to worry because the negative energy that we generate when we worry only makes more troubles and problems gravitate towards us. If we have the habit of going to the temple to pray with worry gnawing at our hearts, God Himself gets worried when we enter the temple and says – "Oh, this devotee has come to place the same worries before Me again." So, we should never do this. From today, whenever you go to the temple, just say – "Dear God, till now I was simply bombarding You with my worries out of sheer ignorance. Unlike me, You do not know what worry is because You are always loving, joyous and exuberant. So, give me Your love, joy and exuberance and I will drop all my worries and give You back the same love and joy." This is how we should pray to God. Remember, the frog that keeps croaking continuously only attracts the snake which speedily swallows it. So also, if we go on thinking, talking and praying about our worries all the time, we will only attract a great crisis into our lives."

"Most of the time, our feelings are chaotic and disorganized. Many times, we are not aware of the emotions and vibrations that flow from us into the world. We do not check to see whether they are good, bad, negative, positive or divine. When we generate all kinds of thoughts, emotions and vibrations in this way, we are also adding to the huge mass of negativity in the world. So, we should pray to our Guru for Greater Awareness by saying – "These are the kind of feelings within me, O Gurudeva. Please organize my feelings for me and reset my thinking patterns so that I emit only divine vibrations all the time." Then, instead of re-organizing our thoughts, our Guru re-channelizes them completely. Today, our lives are not powerful because our feelings are not powerful.

All our inner power is drained away by our tendency to worry unnecessarily over trifles. The more we worry, the weaker our minds become."

"Until we understand our own true inner feelings, our life is always problematic. As long as things go very smoothly, we are happy and nice to everybody around us. It is only when things go wrong that we realize our own level of inner strength. When we are confronted by a crisis, though the people around us tell us not to worry, and try their best to give us confidence, we are still filled with anxiety and panic. Only when the Guru enters our lives and the name of the Guru reverberates constantly within us will we be free from fear. The more we pray, adore and worship the Guru, the more courage we get. Without the protective and rejuvenating Grace of the Guru, we get tired of battling with life.

"When we stop worrying and pray for happiness, happiness does not come alone; it brings its shadow called prosperity with it. Prosperity is Goddess Lakshmi, the Giver of Abundance. The Scriptures depict Her on a lotus which is soft, pure and beautiful. When our minds shed worry and become soft, pure and beautiful like the lotus, Goddess Lakshmi will come and enthrone Herself there. Today, our minds are hard and impervious to Her Grace. That is why we have to work so hard for prosperity. We think that the ambition to fulfill our material desires fills our life with zest and interest, but it only fills us with worry and unrest. We assume that experiencing the material pleasures of life will fill our lives with joy. However, this joy can never be constant. Life will continue to throw out its challenges at us, but we should not allow this to trigger the response of worry in us. We should all learn this art by watching and interacting with children. A child does not know what worry is. Even when something bad happens, he soon forgets about it and resumes his natural state of exuberant happiness. That is why children are such bundles of joy."

"Faith is the basis of all religions. When we align ourselves with the will of Guru with complete Faith and Surrender, we will no longer resist any circumstance that comes to us. We will flow with life without generating any negative vibrations. Then, our minds become soft and pure.

When we pray for the welfare of all beings, our love is freed from attachment and flows out to all beings. We may ask – 'If we cannot unload our worries before God, then who will listen to our troubles and worries? That is why God sends the Guru into our lives. When we worship the Lotus Feet of the Guru, it removes all the troubles, problems and worries from our lives as well. It makes our minds soften and melt with surrender."

So, have faith in your Guru who is nothing but the reflection of your very soul itself and surrender everything at His Lotus Feet. Then, God's joy will flow to encompass you. You will all experience this. You are born to experience this. Always keep your feelings pure, then the mind becomes pure. Then the tongue only utters words that are absolutely pure." Now from a state of worry and emotions, we cross over to the state of Empowerment.

Empowerment makes your heart dance with bliss and may all of you make millions of hearts dance with bliss too. ■

SYMBOLISM BEHIND A TEMPLE

Ramnath Narayanaswamy

In a remarkable discourse delivered recently in London, Sadguru Murali Krishna, (now widely recognised as Sadguru Sri Sharavana Baba) provided a refreshingly different perspective on the meaning of a temple. Such a definition is not to be encountered in any of our scriptures or in the writings of any spiritual master and yet it is an astonishingly original interpretation of the symbolism behind a temple in Sanatana Dharma or the eternal religion.

"A temple," said Sadguru Murali Krishna, "is a living personification of respect. If you give respect to the temple, all those present in the temple will respect you. Even if a robber comes to the temple with a genuine desire in his heart to change or mend his ways, it is your duty to help him. This is indeed the purpose of the temple: to create, nurture and sustain respect."

"The distinguishing characteristic of the relationship between Lord Krishna and Sudama," said Swamiji, "was their mutual respect for each other. Their relationship was a temple that cemented the respect they had for each other. To go from the bottom to the top is courage. To go from the top to the bottom is degrading. Selfless service to spiritual masters is invaluable and precious. Consume the Vedas! They are the best medicine!"

Respect for the other is at the heart of all spirituality. We go to the temple to pray to our inner Self. The body is the temple. There is no place where the Self is not. It therefore follows that we must treat the entire universe as we treat a temple. Training is an essential pre-requisite: "This world can be successfully negotiated only through training. Training is essential. In the times we live in, the ego rules the world. We are obsessed by feelings like I am big and it is my will that counts. However, what is needed is meditation, penance, prayer and worship. It is through the pursuit of these four activities that we can develop the strength to engage the world. Know this to be the truth."

"We must continuously create good. Unfortunately today the world does not know how to recognize the full stop. Let there be a lot of good in the universe. We must first gather the ingredients and then mix it in the proper proportion. We must then cook them and only then can the payasam or sweet porridge be made. If you have mastered the art of cooking, then you can master the way you can lead your life." ■

STAY FREE OF ATTACHMENT

Sant Rajinder Singh

One day a rich man came to Gautama Buddha and said, "I see that you are the Awakened One. I am coming to you for some advice." The Buddha asked him to share what was on his mind. The rich man continued, "My life is focussed on my work. Although i have made a lot of money, i am preoccupied with worry. Many people work for me and i am responsible for them. They depend on me for their success. Yet, i enjoy my work and enjoy working hard. When i met your followers they spoke of the importance of living the life of a recluse. I also notice that you yourself were the son of a king, living in wealth and splendour, but you gave it up to wander as a homeless recluse looking for enlightenment. I want to know if i should do the same thing and give up my wealth. I want to do the right thing and be a blessing to my people. Should i also give up everything i have to find truth?"

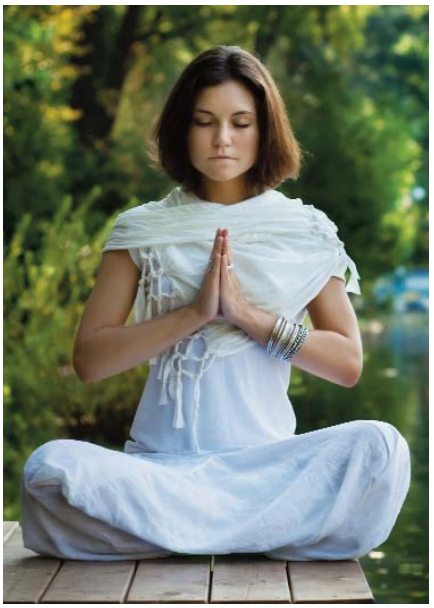

The compassionate Buddha told him, "Anyone can receive the bliss of finding truth as long as he follows the path of unselfishness. If you are going to cling to your wealth, then it is better to throw it away than let it poison your heart. But if you do not cling to it, and use it wisely, then you will be a blessing to people. It is not wealth and power that make people slaves, but clinging to them."

The Buddha explained to him that his teaching did not require anyone to become homeless or give up the world unless he wants to. But it did require people to free themselves from the illusion that the body and world are their permanent and true home. He said his teaching required people to lead an ethical life. The Buddha said: "Whatever people do, either in the world or as a recluse, they should put their whole heart into it. People should be committed to whatever they do but full of energy. If they face struggles, they should do so without hatred or envy. People should live a life not of ego, but of truth, and then bliss will fill their soul." Non-attachment does not mean we have to give up our homes, wealth, families and what we have received in life. It only requires that we give up attachment to these things. Whatever situation in which we find ourselves has come to us due to our karma. Our attachment should be with God. Our attention should be on making sure our soul attains communion with God.

Those who are blessed with wealth should make the best use of it by taking care of their family responsibilities and then sharing with others. We need not give up everything. We can live in the world and do the best we can, but keep our focus and attention on finding God. Our hearts can develop purity and an attitude of selfless service and sharing with others.

We need not be attached to our outer situation. We can work to make a living while also working to develop spiritually. If we are blessed with wealth, we need not throw it away, but we should use it to help others, and to benefit from having more free time to meditate and do selfless service. The key is to live in the world, but not be attached to it. ■

WHEN A ROSE IS NOT A ROSE

Purnima

A wilting rose, wrinkling skin, greying hair, growing kid, all of these remind us of one fact of life, and that fact is: Impermanence. Has this fact of life ever troubled you? Disturbed you deeply? Then you are lucky, because in you, a Buddha could be born. All of us are aware of the story how Siddhartha became the Buddha because he was deeply perturbed by the scenes of a sick person, an old man and a dead body being carried to the burial ground. It prompted him to question the nature of life and led him finally to nirvana.

Let us enquire, is suffering truly in the fact that our skin is less charming or in the fact that we are not as much in control of our business or household as we were 20 or 30 years ago? No. Our suffering is in the non-acceptance of change. Life is a process of change but whether we evolve through it or degrade through the process is in our hands. Great people do not have special situations that made them 'great'. They pay great attention to ordinary situations of life without ignoring or evading them.

Why do we resist change? It is because we are afraid of losing the beautiful experiences of life. Love, pleasure, significance, happiness, comfort and other beauties of life that we cherish, we do not want the ruthless wave of life to wash them away. We do not know what the 'new' might hold for us. Fear of uncertainty drives us to resist change. On the contrary if permanence were the nature of life, then what if pain, displeasure, anger, disappointment, fear, frustration and the whole host of unpleasant experiences continue ad infinitum? That would be, being stuck in a hellhole.

Seated beneath the Pipal tree 2,500 years ago, Buddha taught the Pratitya Samutpada Sutra which said, "This is because that is. If this is not, then that is not". True happiness is sourced in wisdom that everything changes. Change happens as the factors that go to constitute something change. Your skin changes when there are biological changes. That we know. What causes a relationship to change? The emotion you feel towards a person is dependent on the perceptions you hold at that point of time. As life throws up more and more experiences, your perceptions keep changing. Love, affection, friendship do continue through life but they, too, take on the changes life brings on them and evolve with time. That is why relationship between partners is never where it started. It changes with passing years. If necessary awareness is brought to it, it has the potential to give you more joy and togetherness. In unawareness the relationship could degenerate into pain and displeasure.

As we observe the truth of what the Buddha spoke, we come to clarity, to peace with ourselves. Who have we to blame? What can really be held responsible for our unhappiness? Some deep-seated anguish, disappointments and yearnings lose charge over us as this wisdom dawns. All of us have a control freak hidden in us shrieking for absolute power over everything; all of us have a perfectionist hankering for the creme de la creme in every situation; all of us have a lover in us looking out for ideal responses from loved ones. How do you think our thirst could ever be quenched? It can only be appeased. Hence, the Buddha spoke of freedom as the appeasement of all obsessions. Our obsessions can be appeased when we see what life is at this moment; it is not the next moment. A rose is not a rose if it stays forever. ■

सलाह

अनुभव की सीख

मुरली कांठेड़

कई बार हम जल्दबाजी में अल्पकालिक लाभों के लिए हमारे दीर्घकालीन फायदों का बलिदान कर देते हैं। एक शर्मीला बालक था महेश, जिसका मजाक उसके इलाके में रहने वाले कुछ बच्चे हमेशा उड़ाया करते थे। महेश उन मजाकिया बातों को सह लेता था। इन बच्चों ने महेश के सामने सबसे नया खेल पांच रुपये का एक सिक्का और दो रुपये का एक सिक्का रखते हुए खेला और उससे एक सिक्का चुनने के लिए कहा। पांच रुपये का सिक्का दो रुपये के सिक्के से छोटा होता है। महेश ने देखते ही दो रुपये का सिक्का चुन लिया। महेश की अज्ञानता देखते हुए ये बच्चे बहुत खुश हो गए और सोचने लगे कि उन्होंने उसे मूर्ख बना दिया है। वे अगले चार दिनों तक उसके साथ यही खेल खेलते रहे और महेश हर समय दो रुपये का सिक्का ही चुनता गया।

एक व्यक्ति जो यह सब कुछ देखता जा रहा था, महेश के बारे में बहुत दुखी हो गया। पांचवें दिन वह यह दृश्य और आगे नहीं देख सका कि महेश फिर से दो रुपये का सिक्का चुनता है और दूसरे बच्चे उसकी पीठ के पीछे हंसते हैं और उसका मजाक उड़ाते हैं।

उसने महेश को एक ओर बुलाया और वह चुपचाप उसके साथ बैठ गया। उस व्यक्ति ने महेश को समझाया कि वे बच्चे क्या कर रहे हैं और वे कैसे उसे मूर्ख बना रहे हैं। महेश ने धैर्यपूर्वक उस व्यक्ति की बातें सुनीं। बाद में वह उस व्यक्ति की चिंता समझकर मुस्कराया और बोला, मैं जानता हूं कि मैं क्या कर रहा हूं। उस व्यक्ति को सचमुच महेश के बारे में दुख हुआ और उसने एक बार फिर से उसे समझाया कि वे बच्चे कैसे उसे धोखा दे रहे थे।

महेश ने तब शांतिपूर्वक कहा - अंकल, यदि पहले दिन मैंने पांच रुपये का सिक्का चुन लिया होता, तो खेल वहीं खत्म हो गया होता और मेरे पास केवल 5 रुपये आए होते। आज पांचवां दिन है और मेरे पास अब 10 रुपये हो गए हैं। मुझे बताइए, मूर्ख कौन है? वह व्यक्ति अत्यंत आश्चर्यचकित रह गया। महेश ऐसा मूर्ख बच्चा नहीं था, जैसा उसने सोचा था। वह एक परिपक्व बालक था। वह होशियार था, वह जानता था कि हर दिन की जीतों का बलिदान करके उसे अधिक फायदा होने वाला था।

हममें से प्रत्येक के लिए सीखने हेतु यह कितना अधिक शिक्षादायी पाठ है। कभी-कभी हम सोचते हैं कि हम दूसरों को बेवकूफ बना रहे हैं, पर गहराई में झांकिए-क्या आप तो बेवकूफ नहीं बन रहे हैं? हममें से कई महेश जैसा नहीं बन सकते हैं, जो मूर्ख दिखता हुआ... लेकिन आखिर में जीत उसी की होती है। हम कई बातें तात्कालिक फायदे के लिए करते हैं। हम आगे दृष्टि नहीं दौड़ाते हैं। कभी-कभी यह समाज व परिवार के लिए नुकसानदेह हो सकता है।

अनुभव से सीखा जाता है। हर कहानी के तीन पक्ष होते हैं। आपका पक्ष, उनका पक्ष और सही पक्ष। किसी घटना को जब हम पहली बार सुनते हैं तो यह लगने लगता है कि कोई व्यक्ति बिना किसी संदेह के दोषी है। जब दूसरा पक्ष सामने आता है तो हमारा दिमाग पूरी तरह बदल जाता है। हमें किसी निर्णय पर पहुंचने की जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। यह एक अच्छी सलाह हो सकती है।

यहां हमें हर दिन हर समय मानवीय संबंधों और मानवीय भावनाओं का सामना करना पड़ता है। फैसले करने, भरोसा देने या निर्णय करने से पहले हमें बहुत ही सावधान रहना होता है। इसलिए सुनिए और अच्छी तरह से सुनिए, जैसे अक्सर हमें कहा जाता है कि ईश्वर हमसे चाहता है कि हम जितना बोलें, उससे दुगुना सुनें, जिसका प्रमाण है हमारे पास कान दो परंतु मुंह एक है।

हमें अपने दीर्घकालीन लक्ष्यों की ओर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। दृढ़संकल्प शक्ति के साथ हम उस दिशा में बढ़ते हैं, जहां हम पहुंचना चाहते हैं तो हम तेजी से आगे बढ़ेंगे। हमें अपना अंतिम लक्ष्य निर्धारित करना होगा, निष्ठा से उसके प्रति समर्पित होना होगा तभी निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकेगा। गुरुदेव तुलसी ने ठीक ही कहा है- ''हर समस्या सुलझेगी, आप उलझना छोड़ दें, हर मंजिल मिलेगी आप भटकना छोड़ दें।''

-ए-56/ए, प्रथम तल, लाजपत नगर-2, नई दिल्ली-10024

शक्तिदायक यंत्र

श्रीयंत्र

यह सर्वाधिक लोकप्रिय प्रतीक यंत्र है। इसकी अधिष्ठात्री देवी स्वयं श्री विद्या अर्थात् त्रिपुरसुन्दरी से भी अधिक है यह इस यंत्र की मान्यता है। यह बेहद शक्तिशाली ललिता देवी का पूजा चक्र है। इसको त्रैलोक्य मोहन अर्थात् तीनों लोकों को सम्मोहन करने वाला भी कहते हैं। यह सर्व रक्षाकार, सर्वव्याधिनिवारक, सर्वकष्टनाशक होने के कारण यह सर्वसिद्धिप्रद, सर्वार्थ-साधक, सर्वसौभाग्यदायक माना जाता है। इसे गंगाजल, दूध से स्वच्छ करके पूजा स्थान, व्यापारिक स्थान तथा अन्य शुद्ध स्थान पर रखा जाता है। इसकी पूजा पूरब की ओर मुंह करके की जाती है। श्री यंत्र का सीधा मतलब है लक्ष्मी प्राप्ति का यंत्र। मध्य भाग में बिन्दु व छोटे-बड़े मुख्य नौ त्रिकोण से बने 43 त्रिकोण, दो कमल दल, भूपुर, एक चतुरस 43 त्रिकोणों से निर्मित उन्नत श्रृंग के सदृश्य मेरु पृष्ठीय श्री यंत्र अलौकिक शक्ति व चमत्कारों से परिपूर्ण गुप्त शक्तियों का प्रजनन केन्द्र बिन्दु कहा गया है। जिस प्रकार सभी वचनों में चंडी कवच श्रेष्ठ है उसकी प्रकार से सभी देवी-देवताओं के यंत्रों में श्री देवी का यंत्र सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इसी कारण इसे यंत्रराज व यंत्र शिरोमणि नाम से भी अभिहित किया गया है। दीपावली, धनतेरस, बसंत पंचमी अथवा पौष मास की संक्रांति के दिन यदि रविवार हो तो इस यंत्र का निर्माण, स्थापना व पूजन विशेष फलदाई माना गया है।

श्री महालक्ष्मी यंत्र

श्री महालक्ष्मी यंत्र की अधिष्ठात्री देवी कमला है, अर्थात् इस यंत्र का पूजन करते समय श्वेत हाथियों के द्वारा स्वर्ण कलश से स्नान करती हुई कमलासन पर बैठी लक्ष्मी का ध्यान करना चाहिए। विद्वानों के अनुसार इस यंत्र के नित्य दर्शन व पूजन से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

इस यंत्र की पूजा वेदोक्त न होकर पुराणोक्त है। इसमें बिन्दु, षट्कोण, वृत्त, अष्टदल एवं भूपुर की संरचना की गई है। धनतेरस, दीपावली, बसंत पंचमी, रविपुष्य एवं इसी प्रकार के शुभ योगों में इसकी उपासना का महत्व है। स्वर्ण, रजत व ताम्र से निर्मित इस यंत्र की उपासना से घर व स्थान विशेष में लक्ष्मी का स्थायी वास हो जाता है। ऐसी मान्यता है।

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

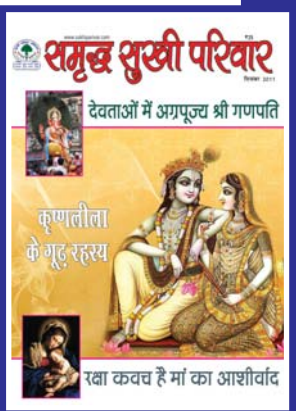

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन–जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई–मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

ई–253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली–110092

फोन: +91–11–26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

पुस्तक समीक्षा

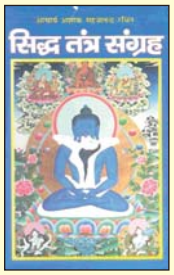

सिद्ध तंत्र संग्रह

ललित गर्ग

अपनी तर्कपूर्णता से प्राच्य विद्याओं की सशक्त विवेचना के माध्यम से लेखक का उद्देश्य पाठक को अंधविश्वासी न बनाकर उनमें जिज्ञासु भाव का सृजन करना है। उन्होंने हिन्दू, जैन, बौद्ध एवं शाक्त सम्प्रदाय के प्राच्य विद्याओं से संबंधित विपुल साहित्य का गहन अध्ययन किया है। जिससे उनकी दृष्टि व्यापक और संकीर्णताओं से मुक्त रही। उनके साहित्य में यही दृष्टि परिलक्षित होती है।

अठारह अध्याय में विभक्त इस कृति में तंत्र विद्या से संबंधित प्राय: सभी पक्षों पर सारगर्भित विवेचन है। यह कृति तंत्र के विषय में व्याप्त भ्रांतियों का निराकरण करते हुए तंत्र के रहस्यों की प्रामाणिक मीमांसा प्रस्तुत करती है।

ऐसे अनेक दुर्लभ प्रयोग मिलेंगे, जो सामान्तयत: पुस्तकों में नहीं मिलते। हमारे आपके साथ अनेक समस्याएं जुड़ी हुई हैं, हमारी अपनी भी और दूसरों की दी हुई भी। इसमें कई समस्याएं तो ऐसी हैं जिनका उपाय हम नहीं जानते, इसलिए वे साधारण होकर भी असाधारण लगती है। कृति में समस्याओं का विश्लेषण करने के साथ उनका समाधान परीक्षित विधियों के आधार पर दिया गया है। पुस्तक का मुख पृष्ठ सुंदर एवं मुद्रण त्रुटिरहित है।

पुस्तक : सिद्ध तंत्र संग्रह
लेखक : आचार्य अशोक सहजानंद
प्रकाशक : मेघ प्रकाशन
239 गली कुंजम, दरीबा कलां, चांदनी चौक
दिल्ली-110006
मूल्य : रु. 300, पृष्ठ सं. : 240

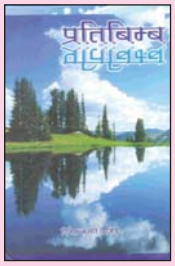

प्रतिबिंब

बरुण कुमार सिंह

कवि का हृदय बहुत ही संवेदनशील होता है। उसकी यही संवेदनशीलता उसके कविता में देखने को मिलती है। हर व्यक्ति का आस-पास के वातावरण, सामाजिक परिवेश, जीवनशैली, आचार-विचार आदि विभिन्न परिस्थितियों से सामना होता है। उसी के अनुरूप अपने विचारों को मन-मस्तिष्क में स्थान देता है।

आज के मशीनी युग में सबसे ज्यादा ह्रास मानवीय मूल्यों का ही हो रहा है। स्वार्थ में अंधा होकर वह इंसानियत से दूर चला गया है। मानव ने अपने जीवन के सपनों का बोझ बच्चों पर लाद दिया है। स्वयं धन की लालसा में सरपट दौड़ लगा रहा है। इसके लिए उसे उचित-अनुचित का भी ध्यान नहीं। कवि ही है जो मनुष्य के अंत:करण को झंकृत कर एक-दूसरे के निकट लाता है और देश की पुकार को सुनता ही नहीं, अपितु गुनता और उसे संवारता भी है।

'प्रतिबिम्ब' के रचनाकार दिनेश कुमार छाजेड़ ने समाज की बुराइयों और त्रुटियों के निराकरण के लिए कविता के माध्यम से विसंगतियों पर बेबाक टिप्पणी की है। प्रस्तुत कृति में लेखक ने 70 कविताओं के माध्यम से वर्तमान के यथार्थ को काव्य में उतारने का सत्प्रयास किया है। सामाजिक विद्रूपताओं को कवि ने अपनी बेबाक अभिव्यक्ति एवं संवेदनाओं से उद्घाटित किया है। वास्तव में कविता केवल मनोरंजन की ही वस्तु नहीं हैं अपितु कुछ चिंतन करने की अवधारणा है। यह काव्य-संग्रह वर्तमान परिवेश का एक प्रतिबिम्ब है। देश और समाज की चुनौतियों का निदर्शन है। इस दृष्टि से यह काव्य-संग्रह पठनीय एवं संग्रहणीय है।

पुस्तक : प्रतिबिम्ब
लेखक : दिनेश कुमार छाजेड़
प्रकाशक : शारदा साहित्य मंच, रावतभाटा
मूल्य : रु. 110, पृष्ठ सं. : 90

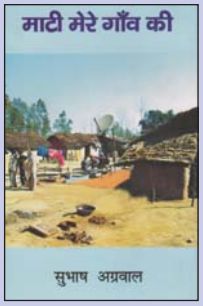

माटी मेरे गांव की

श्रीगोपाल नारसन

परमात्मा ने मनुष्य के लिए पृथ्वी पर रहने की जिस जगह को चुना होगा, वही दुनिया का पहला गांव रहा होगा। यानी यह तय है कि इस दुनिया में पहले गांव का जन्म हुआ और फिर जो गांव सुविधा सम्पन्न होते चले गए उन्हे शहर का नाम दे दिया गया। यही कारण है कि हमारी भाषा, बोली, रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-व्यवहार, संस्कृति, संस्कार सब कुछ गांव की देन है। शहर जाकर कोई कितना ही बड़ा आदमी बन जाए लेकिन उसके दिलो-दिमाग में कहीं-न-कहीं अपने पूर्वजों के गांव की धुंधली यादें जरूर बसी रहती हं। इन्हीं यादों के बल पर वह आगे बढ़ता है और अपनी पहचान बनाता है।

लेखक सुभाष अग्रवाल की कृति 'माटी मेरे गांव की' में साधनहीन गांव के साथ-साथ गांव की आधुनिकता भी नजर आती है। गांव के लोगों की सहकारिता, संयुक्त परिवार का चलन, छोटे-बड़ों का लिहाज, जाति धर्म की मान्यता के बावजूद रिश्तों में बंधा समाज की झलक 'माटी मेरे गांव की' में देखने को मिलती है। चाहे गांव का सरपंच हो या जाति विशेष के समाज का मुखिया, सभी की इज्जत एक सरपरस्त के रूप में गांव के लोग करते थे। गांव में कोई मतभेद, विवाद या फिर झगड़ा होने पर उसे मिल-बैठकर पंचायत में सुलझाने की ताकत पंचों में निहित होती थी। तभी तो गांव भयमुक्त, अपराधमुक्त शान्तिमय वातावरण के लिए जाने जाते थे। सुदूर क्षेत्रों में आज भी ऐसे गांव हो सकते है जिन्होंने कभी पुलिस, मोटरगाड़ी या फिर रेल नहीं देखी। लेकिन उन लोगों को रिश्ते निभाने बहुत अच्छी तरह से आते है। गांव में सफाई करने वाला भी किसी का ताउ है तो किसी का दादा, किसी का चाचा है तो किसी का भाई। यह रिश्ता किसी एक से नही बल्कि पूरे गांव से उम्र के लिहाज से जुड़ा होता है। इसी तरह नाई, धोबी, कुम्हार, बढ़ई, मोची, पंडित, हाफिज, मौलवी, पुम्बा, सफाईदार सभी अपना-अपना काम गांव के लोगों के लिए करते थे बदले में नगदी लेने की भी परम्परा नहीं थी अपितु फसल आने पर फसलाना के रूप में इन लोगों को फसल का हिस्सा मिलता था। जिस कारण गांव में कोई भी भूखा नहीं रहता था। गांव के इसी रूप को सामने लाने का लेखक ने प्रयास किया है। उनकी यह कृति गांव का वह प्रतिबिम्ब है जिसे देखकर हर कोई अपने अतीत को खोजेगा और 'माटी मेरे गांव की' से स्वयं को जोड़कर उसी सुखद अनुभूति का एहसास करेगा।

गांव, गाय व गोधूली के साथ ग्रामीणों की अंतरंगता और उनका समर्पण ही गांव की संस्कृति व परम्परा को परिलक्षित करता है। जिसे बहुत ही सरल और सटीक ढंग से शब्दों में पिरोकर प्रस्तुत किया गया है। 'माटी मेरे गांव की' में गांव के 35 विषयों को उकेरा गया है। जिनमे मुख्य रूप से मिट्टी की खुशबू, मेरे गांव के नाई, मेरे गांव का आर.एम.पी. डाक्टर, मेरे गांव का डाकिया, बिजली का आगमन, सहकारिता और सहनिर्भरता, मेरे गांव की संस्कृति, मेरा स्कूल आदि का जिक्र किया गया है, वही गांव का मेला मौसम मनोरंजन और राजनीति पर भी कलम चलाई गई है। कृति 'माटी मेरे गांव की' निश्चित ही उन लोगों के लिए आक्सीजन का काम करेगी जिनका दिल शहर में जाकर भी गांव के लिए धड़कता है।

पुस्तक : माटी मेरे गांव की
लेखक : सुभाष अग्रवाल
प्रकाशक : श्री महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा,
जिला-राजकोट-363650 (गुजरात)
मूल्य : रु. 200, पृष्ठ सं. : 128

पर्यटन

पुखराज सेठिया

प्रकृति की रंगशाला कौसानी

अल्मोड़ा स्थित कौसानी की यात्रा के पूर्व यहां की प्राकृतिक सुंदरता के बारे में मैंने काफी कुछ सुन रखा था। वैसे तो पूरा कुमायूं मण्डल ही अपनी प्राकृतिक सुषमा और सुंदरता के लिए विख्यात है। नैनीताल, मसूरी, चकराता, रानीखेत, पौड़ी, टिहरी, गढ़वाल, पिथौरागढ़, ऋषिकेश, उत्तरकाशी, हलद्वानी, देहरादून-सभी की अपनी-अपनी विशेषताएं हैं। किन्तु मेरे लिए कौसानी के आकर्षण का प्रमुख कारण उसकी प्राकृतिक सुंदरता है।

कौसानी समुद्र तल से 1890 मी. की ऊंचाई पर पिंगनाथ पर्वत शिखर पर बसा है। कौसानी प्राकृतिक सौन्दर्य से सराबोर है। तीन सौ किलोमीटर के अर्ध वृत्ताकार घेरे में बर्फ से ढकी चोटियों की कतार इस जगह को भव्ययता प्रदान करती है।

डॉ. हरिवंशराय बच्चन की पंतजी से गहरी मित्रता थी। अल्मोड़ा की यात्रा के बाद बच्चनजी ने लिखा ''कौसानी में और कौसानी के चारों ओर प्रकृति की पर्वतीय सौन्दर्य बिखरा हुआ था, साथ ही उस सौन्दर्य में एक प्रकार की तपोद्भूत पावनता भी थी। इस सुंदरता और पावनता को पंतजी के भावुक हृदय ने जी भर पिया।'' कौसानी स्थित पंतजी के पैतृक आवास में संस्कृति विभाग उत्तराखण्ड द्वारा वीथिका (गैलरी) की स्थापना की गई है।

मेरा स्वर होग जग का स्वर,
मेरे विचार जग के विचार,
मेरे मानस का स्वर्गलोक,
उतरेगा भू पर नयी बार।

वीथिका के बाहर बोर्ड पर लिखित पंतजी की उपरोक्त पंक्तियां पर्यटकों को उनकी सृजनधर्मिता का स्मरण कराती है। उनकी प्रारंभिक रचनाओं में कौसानी का मनमोहक वर्णन मिलता है। वीथिका में पंतजी से संबंधित सामग्री एवं रचनाओं को प्रदर्शित किया गया है।

महात्मा गांधी ने कौसानी के शांत वातावरण से प्रभावित होकर सन् 1929 में पूर्व निर्धारित दो दिन की जगह 14 दिन यहां बिताए थे और यहीं रहकर 'अनासक्त योग' नामक पुस्तक की रचना की थी। गांधीजी उस समय जिस स्थान पर ठहरे थे, वह आज 'अनासक्त आश्रम' के नाम से जाना जाता है। आश्रम में प्रार्थना हाल, चित्र प्रदर्शनी तथा अध्ययन की सुंदर व्यवस्था है। पर्यटकों के रहने के लिए आवास भी यहां उपलब्ध हैं।

कौसानी में उत्तराखण्ड चाय विकास परियोजना के अंतर्गत पहाड़ों पर चाय बगान बनाये गये हैं।

लक्ष्मी आश्रम के नाम से यहां एक अग्रणी स्वयंसेवी संस्था है। यह पहाड़ की महिलाओं के आर्थिक स्वावलंबन एवं शिक्षा से संबंधित गतिविधियों को संचालित करती है।

दर्शनीय स्थलों में पिनाकेश्वर में शिव मंदिर है। कौसानी से बीस किलोमीटर की दूरी पर स्थित पिनाकेश्वर अपनी सुंदरता से पर्यटकों को लुभाता है। कौसानी से पहहत्तर किलोमीटर की दूरी पर चकोरी से हिमालय का भव्य दृश्य दिखाई देता है।

कौसानी में ठहरने के लिए आधुनिक होटल एवं गेस्ट हाउस हैं। स्नोव्यू प्वाइंट पर खाने-पीने के लिए बढ़िया रेस्तरां हैं। इन रेस्ताओं की छतों पर दूरबीनें लगी हुई हैं। कौसानी में पहाड़ की ऊपरी चोटी से नीचे घाटी तक फैली प्रकृति की अनुपम छटा के मनमोहक दृश्य कैमरों में कैद करने के लिए पर्याप्त हैं।

-एम-25, लाजपत नगर-2, नई दिल्ली-110024

अध्यक्षीय

अशोक एस. कोठारी

गणि राजेन्द्र विजय का भारत की संत परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। भगवान महावीर के सिद्धांतों को जीवन दर्शन की भूमिका पर जीने वाले इस संत चेतना ने संपूर्ण मानवजाति के परमार्थ में स्वयं को समर्पित किया है। उन्हीं के नेतृत्व में राष्ट्रीय स्तर पर संचालित सुखी परिवार अभियान एक ऐसा अभिनव उपक्रम है जिसके अन्तर्गत देश की परिवार संस्था को सुदृढ़ बनाने के साथ–साथ उसके नैतिक और चारित्रिक उन्नयन के प्रयत्न किये जा रहे हैं। यह अभियान अपनी विविध रचनात्मक एवं सृजनात्मक गतिविधियों के माध्यम से राष्ट्र और समाज की उन्नति के लिए कृत संकल्प है।

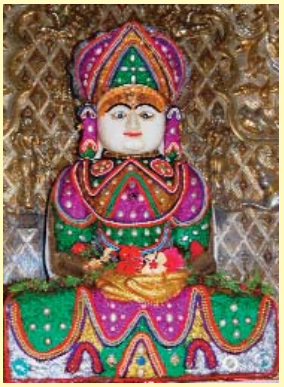

एक नई परम्परा की शुरुआत

सुखी परिवार फाउंडेशन के राष्ट्रीय अध्यक्ष का दायित्व मेरे लिए एक सौभाग्य का सूचक है। ऐसा लग रहा है जीवन को नजदीकी से देखने का एक अवसर प्राप्त हुआ है। संसार की बीहड़ वीथियों के बीच मंजिल के सही रास्ते तलाशने की दृष्टि से सुखी परिवार अभियान गणि राजेन्द्र विजयजी द्वारा प्रणीत एक अभिनव उपक्रम है। यह आदिवासी उत्थान का एक विशिष्ट उपक्रम है। आदिवासी बच्चों के लिए केन्द्र सरकार एवं गुजरात सरकार के सहयोग से आधुनिक सर्वसुविधायुक्त एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय का निर्माण कार्य कवांट (जिला–वडोदरा) में लगभग संपन्न हो चुका है और शिक्षा का नियमित क्रम भी प्रारंभ हो चुका है। इसके अलावा भी इस क्षेत्र में आदिवासी कन्याओं के लिए ब्रह्मसुंदरी कन्या छात्रावास–बडोली, सुखी परिवार जीवदया गौशाला एवं संत विश्राम स्थल, बलद आदि आदिवासी उत्थान और उन्नयन की विशिष्ट योजनाएं गणि राजेन्द्र विजयजी के मार्गदर्शन में सुखी परिवार फाउंडेशन द्वारा सफलतापूर्वक संचालित है। इसी आदिवासी भूमि में अक्षय तृतीया के पावन अवसर पर गणि राजेन्द्र विजयजी 23–24 अप्रैल 2012 को अपना पहला वर्षीतप का पारणा करेंगे। इस उपलक्ष्य में अनेक कार्यक्रम कवांट एवं बलद में आयोज्य हैं।

जैसा कि सर्वविदित है कि गणि राजेन्द्र विजय का भारत की संत परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। भगवान महावीर के सिद्धांतों को जीवन दर्शन की भूमिका पर जीने वाले इस संत चेतना ने संपूर्ण मानवजाति के परमार्थ में स्वयं को समर्पित किया है। उन्हीं के नेतृत्व में राष्ट्रीय स्तर पर संचालित सुखी परिवार अभियान एक ऐसा अभिनव उपक्रम है जिसके अन्तर्गत देश की परिवार संस्था को सुदृढ़ बनाने के साथ–साथ उसके नैतिक और चारित्रिक उन्नयन के प्रयत्न किये जा रहे हैं। यह अभियान अपनी विविध रचनात्मक एवं सृजनात्मक गतिविधियों के माध्यम से राष्ट्र और समाज की उन्नति के लिए कृत संकल्प है।

यहां मैं अक्षय तृतीया के महत्व की भी चर्चा करना चाहूंगा। अक्षय तृतीया तप, त्याग और संयम का प्रतीक पर्व है। इसका सम्बन्ध आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभ देव के युग और उनके कठोर तप से जुड़ा हुआ है। जैन इतिहास और परम्परा में चली आ रही वर्षीतप की साधना और प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभनाथ का पारणा निस्संदेह ढेर सारे तथ्यों को उद्घाटित करता है। यह ऋषभ की दीर्घ तपस्या के समापन का दिन है। इस दिन देशभर में आचार्यों और मुनियों के सान्निध्य में अनेक आयोजन होते हैं और वर्षभर एकांतर तप करने वाले तपस्वी भाई–बहिन अपनी तपस्या की पूर्णाहुति करते हैं।

सभ्यता और संस्कृति की विकास यात्रा का नाम है ऋषभ। लगभग तिरासी लाख वर्ष पूर्व के सांसारिक जीवन को विविधमुखी मूल्यों के रूप में स्थापित कर भगवान ऋषभदेव ने धर्म क्षेत्र की यात्रा का शुभारंभ किया, वे सम्राट से संन्यासी बने, उनके प्रति जनता में गहरा आदर भाव था। यही कारण रहा कि उनके प्रजाजनों को इस बात का ज्ञान नहीं था कि भगवान ऋषभदेव को भिक्षा में भोजन की भी आवश्यकता होगी। भगवान प्रतिदिन शुद्ध आहार की गवेषणा करते हुए घर–घर में घूमते, लेकिन अज्ञानता के सघन आवरण के कारण कोई भी उन्हें भोजन उपहृत नहीं करता। लोग उन्हें आदर के साथ हाथी, घोड़े, रथ, रत्नाभूषण, रत्न जड़ित पादुकाएं ग्रहण करने की प्रार्थना करते।

भगवान ने प्रपौत्र श्रेयांस के हाथों इक्षुरस का सुपात्र दान लेकर एक नई परम्परा की शुरुआत की। इन अप्रत्याशित क्षणों के साक्षी बनकर देवलोक से समागत देवतागण भी अहोदानं–अहोदानं की ध्वनि प्रकट करते हुए पांच प्रकार के द्रव्यों की वर्षा की। कहा जा सकता है कि इस महत्वपूर्ण प्रसंग से जुड़कर बैसाख शुक्ल तीज का दिन जिसे अक्षय तृतीया का सम्बोधन भी प्राप्त हुआ एक दृष्टि से धर्म क्षेत्र में नयी सोच के दर्शन कराने वाला दिन बन गया और इसी दिन लोगों को सुपात्र दान की विधि और सुपात्र दान की महिमा से सुपरिचित होने का अवसर प्राप्त हुआ। यही सन्दर्भ तपस्या और साधना का शुभ मुहूर्त बन गया। यह त्यौहार हमारे लिए एक सीख बने, प्रेरणा बने और हम अपने आपको सर्वोतमुखी समृद्धि की दिशा में निरंतर गतिमान कर सकें। अच्छे संस्कारों का ग्रहण और गहरापन हमारे संस्कृति बने, यही अभीप्सा है। ■

L.M.G. ENGINEERING COMPANY

Manufacturers and Exporters of:
LIVE BRAND [ISI] MARKED HOT GALVANISED MALLEABLE PIPE FITTINGS & SCAFFOLDINGS
B-23 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

LIVE IDOL IDEAL LIFE

SUPREME METAL INDUSTRIES
THE MAHAVIR VALVES INDUSTRIES

NIRMAL KUMAR JAIN +91–9888005336
SANJIV JAIN +91–9815199268
PRASHANT JAIN +91–9815101168

RESIDANCE: 267, ADARSH NAGAR, JALANDHAR

Manufacturers and Exporters of:
LIFE & IDEAL BRAND [ISI] MARKED GUNMETAL AND BRASS VALVES AND COCKS
C-71 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
April 2012

SHREE AADINATH TRADING COMPANY

BLACK DIAMOND MOVERS

COAL CONSULTANTS, COAL CO ORDINATORS, COAL MERCHANTS ,COAL HANDLING AGENTS

HIGHLIGHTS

- Leading Coal Handling Agents and Coordinators since 45 years.
- Complete Coal Solutions under one Roof.
- Handling bulk Coal requirements of Power Plants, Iron and Steel Plants and Paper Mills from the various subsidiaries of Coal India Ltd.
- Expertise in Coal Linkage from Ministry of Coal and Coal India Ltd.
- Expertise in Rake Loading/Unloading and Liasioning.

JAIN GROUP

Branches: Assam, Madhya Pradesh
Maharashtra, Uttar Pradesh
Uttarakhand, West Bengal
Jharkhand

CONTACT DETAILS:
Address – BJ 63, Ground Floor, Sec-2,
Salt Lake, Kolkata. (W.B)
Contact Person:
Amit Jain- +91 9412702749
Ankit Jain- +91 9830773397
blackdiamondmovers@gmail.com

If undelivered please return to:
Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092